कुरुक्षेत्र

नवम्बर, 1992

तीन रुपये

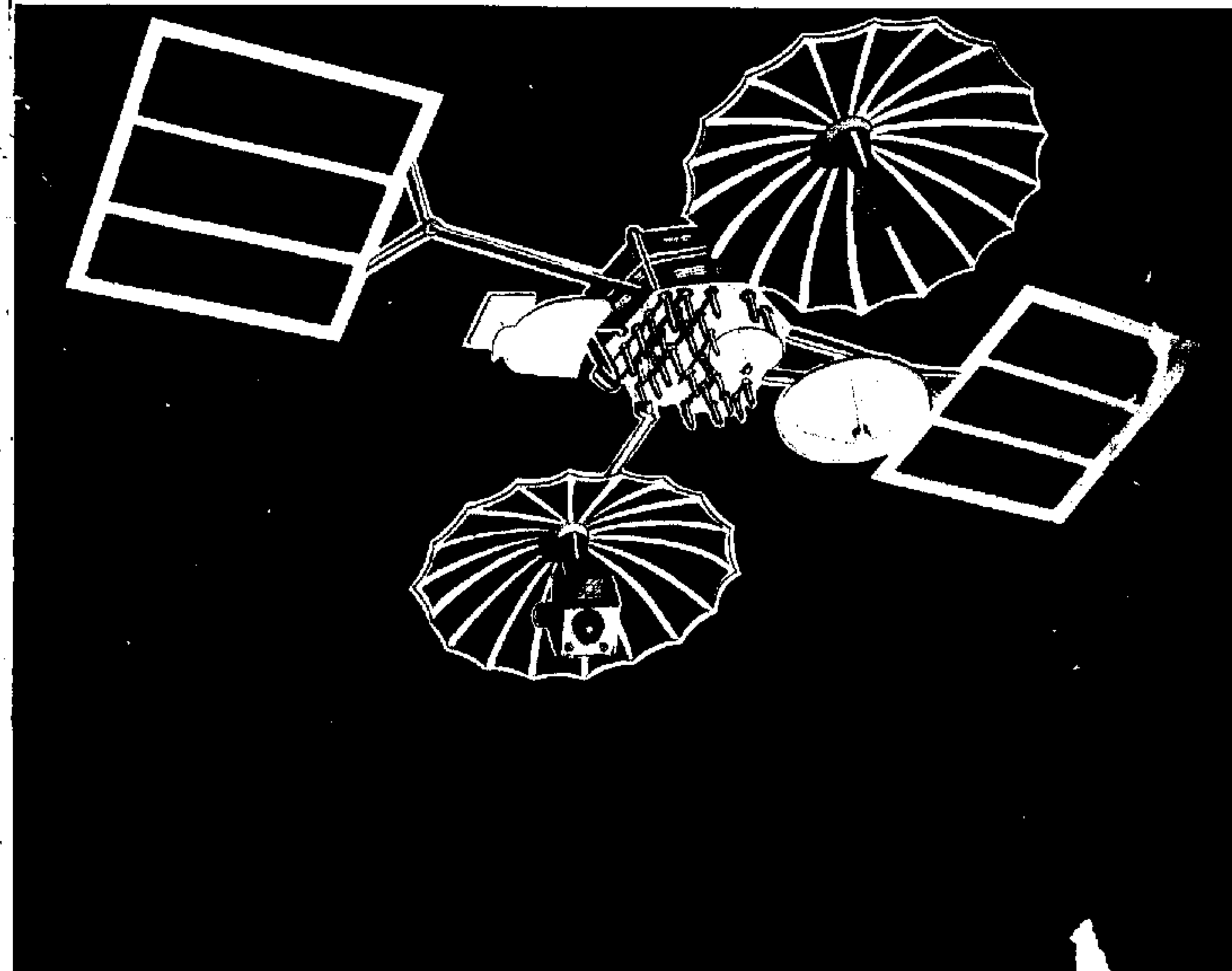

सम्पूर्ण साक्षरता एवं

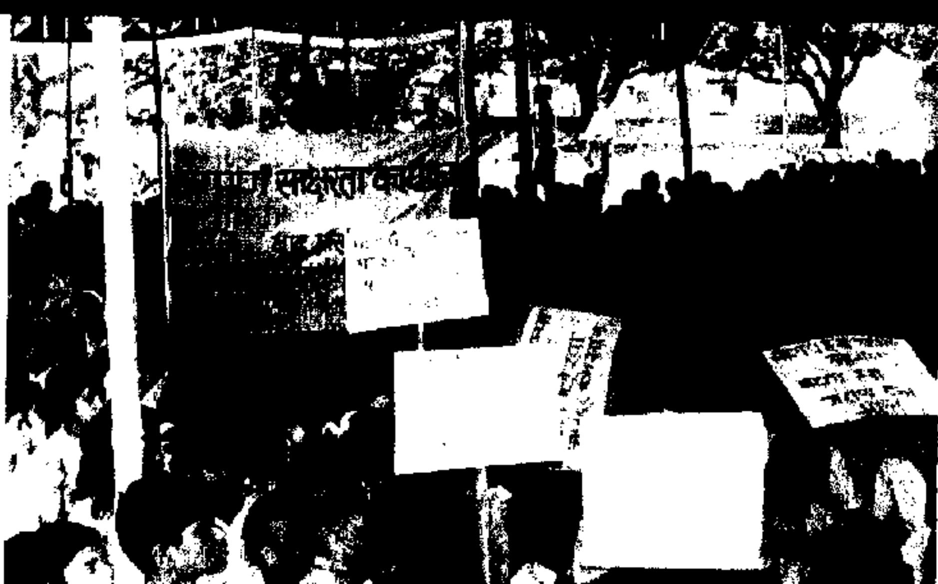

संचार माध्यमों की भूमिका

ग्रामीण क्षेत्रों में प्रचार माध्यमों की स्थिति

□ यतीश मिश्र □

संचार माध्यम बड़े ही सूक्ष्म तरीके से लोगों पर असर डालते हैं। असर इतना गहरा व व्यापक होता है कि व्यक्ति के दिलो-दिमाग में तब्दीली से लेकर सामाजिक परिवर्तन तक हो जाता है। यह सब एक खास पद्धति के तहत होता है जिसे कई कारक प्रभावित करते हैं। एक सामान्य सामाजिक संरचना को ध्यान में रखकर गांवों में होने वाले इस परिवर्तन-प्रक्रिया का हम सविस्तार अध्ययन करेंगे।

ग्रामीण वातावरण और संचार माध्यम

भारत एक ग्राम प्रधान देश है और व्यक्ति ग्रामीण जनसंख्या की इकाई। आज के सूचना युग में आधुनिक संचार माध्यम–रेडियो, टी.वी., वी.सी.आर., फिल्म आदि चुपके से ग्रामीणों के बीच घुसपैठ करती है। फलस्वरूप व्यक्ति के सोचने-विचारने का तरीका नैतिक दृष्टि, आकांक्षाएं व विश्वास में बदलाव आता है। बदलाव की यही स्थिति उसे परम्परावादी से आधुनिक बनाती है।

एक विकासशील देश का ग्रामीण वातावरण बहुत सारे विरोधाभास लिए होता है। एक साथ कई तरह के सामाजिक घटक आपस में टकराते हुए आगे निकलने की कोशिश करते रहते हैं। मसलन अंधविश्वास, परंपरा, साक्षरता-निरक्षरता, जादू-टोना, मिथ्याभिमान आदि संघर्षरत होते हैं। फलतः विकास तो होता है लेकिन इसकी गति धीमी व दिशाहीन होती है।

ऐसी स्थिति में संचार माध्यमों का प्रवेश ग्रामीणों के दिलो-दिमाग में उथल-पुथल पैदा करता है। लोग सही निर्णय नहीं ले पाते। यद्यपि आधुनिक मीडिया अपने आप में यथार्थ लिये होता है परंतु ग्रामीणों के लिए यह अजूबा ही होता है। कुछ लोग इसका अंधानुकरण करते हैं तो कुछ लोगों के लिए यह मनोरंजन का विषय होता है। वैसे लोगों की भी खासी प्रतिशत है जो इससे कुछ सीखते हैं और वास्तविक जीवन में भी इसे प्रयोग में लाते हैं।

प्रभाव

संचार माध्यम से प्रभावित होने के तरीके हैं–देखकर, सुनकर और पढ़कर। खासकर सामान्य या विशेष रुचि के साथ इसका अनुभव प्राप्त करके। यह प्रभाव व्यक्तिगत या सामूहिक दोनों हो सकता है। इसके तहत हम यह अध्ययन करते हैं कि संचार माध्यम का प्रभाव-क्षेत्र कितना है और किस हद तक व्यक्ति या समूह इससे प्रभावित होता है।

किसी समाज पर संचार माध्यम का असर इस बात पर निर्भर करता है कि उसका सामाजिक स्तरीकरण कैसा है, आर्थिक स्थिति कैसी है। साथ ही उस क्षेत्र के व्यक्तियों की आय, शिक्षा, व सामाजिक-आर्थिक संरचना भी इसे काफी हद तक प्रभावित करती है। ऐसा देखा गया है कि शिक्षित तथा अच्छी आय वाले लोगों की संचार माध्यम तक अच्छी पहुंच होती है। यही वजह है कि गांवों की अपेक्षा इसका प्रचार-प्रसार शहरों में अधिक हुआ है।

चूंकि अधिकांश ग्रामीण जनसंख्या गरीब है या इसके आसपास है। अतः महंगे टेलीविजन सेट खरीदने में वह अक्षम होती है। अपने जीवन-यापन के लिए कठिन शारीरिक मेहनत करने के बाद या तो ये लोग आराम करना पसंद करते हैं या अशिक्षित होने के कारण इसकी उपयोगिता से अनभिज्ञ होते हैं। रेडियो सेट सस्ते होने के कारण इन गरीब तबकों के बीच काफी लोकप्रिय और प्रभावी रहा है। कुछ वर्ष पूर्व जब गांवों में टेलीविजन नहीं पहुंचा था, इनके बीच साइकिल, घड़ी और रेडियो आधुनिकता की पहचान बन गई थी। बावजूद इसके, गांवों में कुछ लोग ऐसे भी हैं जो आर्थिक रूप से समृद्ध होने के कारण महंगे प्रचार माध्यम से लाभान्वित हो रहे हैं।

गांवों और शहरों दोनों जगह संचार माध्यम का असर विभिन्न कारणों से बंटा हुआ है। उन गांवों में जो कि शहर से काफी दूर हैं, जहां यातायात के साधन उपलब्ध नहीं हैं, सड़कें नहीं हैं या कच्ची हैं, जहां बिजली नहीं पहुंची है, निःसंदेह वहां संचार माध्यम का असर बहुत कम है या नगण्य है। ठीक इसके विपरीत जहां उपरोक्त सुविधाएं हैं, वहां इसका अच्छा असर है।

यह कहना मुश्किल है कि संचार माध्यम (इकाई के रूप में एक रेडियो या टी.वी. सेट को ले सकते हैं) का असर व्यक्तिगत होता है या सामूहिक। यह हर व्यक्ति महसूस करता है कि इसका असर व्यक्तिगत होता है। लेकिन जब बहुत

लोग ऐसा ही महसूस करते हैं तो यह असर सामूहिक हो जाता है। पर जैसे ही यह सवाल उठता है कि एक टी.वी. सेट एक साथ कितने लोगों को प्रभावित करता है तब मामला कुछ उलझ जाता है। वस्तुतः यह बहुत सारी चीजों पर निर्भर करता है। जैसे : समय, व्यक्ति का मानसिक स्तर, सामाजिक संरचना, व्यक्ति का शैक्षिक व आर्थिक स्थिति आदि।

विषय

विभिन्न संचार माध्यमों की विषय-वस्तु भिन्न-भिन्न होती है। चाहे वो अखबार हो, रेडियो हो या टेलीविजन, खास श्रोताओं/दर्शकों को ध्यान में रखकर इसकी सामग्री तैयार की जाती है। कुछ प्रोग्राम क्षेत्र विशेष के लिए तैयार किए जाते हैं तो कुछ राष्ट्रीय स्तर पर, तो कुछ अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर। स्वभावतः प्रोग्राम के अनुरूप ही दर्शक/श्रोता/पाठक इससे प्रभावित होते हैं। अगर राष्ट्रीय स्तर का प्रोग्राम है तो देश के विभिन्न भागों के लोग इसे देख-सुनकर लाभान्वित होते हैं। संचार माध्यम की सामग्री को हम निम्नलिखित भागों में विभक्त कर सकते हैं जैसे–मनोरंजन संबंधी प्रोग्राम, गीत-संगीत, सूचनाएं, समाचार, खेल से संबंधित इत्यादि। इन तमाम सामग्रियों को हम मुख्य रूप से तीन श्रेणियों में रख सकते हैं। (1) व्यापारिक कार्यक्रम (2) उद्देशीय प्रोग्राम और (3) सामाजिक बदलाव से संबंधित। कार्यक्रम बनाते समय इन तीन सामग्री-श्रेणियों और इनसे जुड़े व्यक्तियों/समुदायों को तो ध्यान में रखा ही जाता है, साथ ही इससे होने वाले संभावित प्रभावों को भी अनुमान लगा लिया जाता है।

उपरोक्त दो (व्यापारिक और उद्देश्यीय) प्रकार के कार्यक्रम ग्रामीण विकास के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। इनके माध्यम से गांवों की तस्वीर मनचाहे ढंग से बदली जा सकती है।

इसके अलावा किसी विषय-वस्तु को हम अप्रत्यक्ष और प्रत्यक्ष की श्रेणी में रख सकते हैं। उदाहरणार्थ जब किसी उत्पाद का संचार माध्यम विज्ञापन करता है तो वह अप्रत्यक्ष रूप से उक्त उत्पाद को खरीदने के लिए कहता है। परन्तु जब किसी सूचना द्वारा वह किसी उत्पाद को आधुनिक और बढ़िया बताता है तो ग्रामीणों पर इसका प्रत्यक्ष असर पड़ता है।

सर्वेक्षण में अक्सर पाया गया है कि रेडियो की अपेक्षा अखबारों व पत्रिकाओं में विकास सम्बधी सामग्री अधिक रहती है जबकि रेडियो में मनोरंजन तथा किसानों से जुड़े कार्यक्रम अधिक होते हैं। इसी प्रकार फिल्मों और टेलीविजन से मिश्रित ...ी प्राप्त होती है।

सूचना परिणाम

इसके अंतर्गत हम यह अध्ययन करते हैं कि जब कोई व्यक्ति या समूह संचार माध्यम के सम्पर्क में आता है तो वह किस हद तक उससे प्रभावित होता है? किसी चीज के प्रति उसका रवैया तथा उसके सोचने-विचारने के तरीके में क्या परिवर्तन होता है। किसी सूचना के ग्रहण करने के बाद वह क्या सीखा है और उसे कितना अमल में लाया है।

ये तमाम चीजें बहुत सारी बातों पर निर्भर करती हैं। मसलन अमुक व्यक्ति/समूह किस प्रकार की सूचना ग्रहण करता है या कार्यक्रम देखता है। कितनी अवधि तक किसी प्रोग्राम के सम्पर्क में रहा है। उस प्रोग्राम में उसकी कितनी रुचि रही है। व्यक्ति का सामाजिक, आर्थिक व शैक्षिक स्तर क्या है? यहां ज्ञातव्य है कि अन्य कार्यक्रमों की अपेक्षा मनोरंजन संबंधी कार्यक्रमों को लोग गंभीरतापूर्वक (कुछ अपवादों को छोड़कर) न देखकर आनंद प्राप्ति के लिए देखते हैं। बेहतर सूचना परिणाम को मापने के लिए आवश्यक है कि व्यक्ति या समुदाय एक लम्बी अवधि तक किसी संचार माध्यम से सम्पर्क बनाए रखे।

ऐसा पाया गया है कि निम्न स्तरवाले सामाजिक-आर्थिक समूहों पर संचार माध्यमों का विशेष प्रभाव पड़ता है। खासकर नए-नए फैशनों के अनुकरण करने में।

सूचना परिणाम एक व्यक्ति या समूह की अपेक्षा दूसरे व्यक्ति या समूह पर कम या ज्यादा होने का मुख्य कारण है श्रोताओं/दर्शकों का अपने स्वभाव के अनुरूप कार्यक्रम का चयन करना। वास्तविक सूचना परिणाम सामाजिक-आर्थिक रूप से पिछड़े और विकसित लोगों के लिए क्रमशः कम और अधिक होता है।

ग्रामीण विकास के लिए आवश्यक है कि एक साथ दोतरफा हमला किया जाए। एक तो साक्षरता अभियान को मजबूत बनाकर ग्रामीणों को साक्षर बनाया जाए तथा उन्हें संचार उपकरण उपलब्ध कराए जाएं। देश के वर्तमान आर्थिक परिदृश्यानुसार बेहतर तो यह होगा कि गांव को विभिन्न समुदायों में बांटकर सामुदायिक संचार उपकरण मुहैया की जाए।

सूचनाओं का असर क्षेत्र विशेष पर भी निर्भर करता है। अगर कोई संचार माध्यम अधिकतम उपज देने वाले बीज के किस्मों के बारे में उस क्षेत्र के किसानों को सूचना देता है जहां का किसान पहले से ही अपने जमीन में उतनी उपज ले रहे हों तो इस सूचना से वे चाहकर भी लाभ न उठा सकेंगे। सूचना के बगैर आज कोई भी आधुनिक समाज किसी भी क्षेत्र में

विकास नहीं कर सकता । यह एक मूलभूत संसाधन है । इसके बिना न तो कोई नियोजन किया जा सकता है न ही सही निर्णय लिए जा सकते हैं । पर्याप्त सूचना के अभाव में किसी भी कार्यक्रम की कोई गारंटी नहीं दी जा सकती क्योंकि सूचना के आधार पर ही विकास की गतिविधियां तय की जाती हैं। आज दुनिया के विकसित देश सूचनाओं का भरपूर इस्तेमाल कर रहे हैं । लेकिन भारत सूचना के दलदल में फंसा जा रहा है । इस स्थिति में सूचना विस्फोट के तमाम नकारात्मक प्रभाव भारतीय समाज को झेलने पड़ सकते हैं ।

विभिन्न संचार माध्यमों द्वारा गांवों में सूचनाओं की बमबारी तो हो रही है लेकिन ऐसे भी नाजुक क्षेत्र हैं जहां सूचना की कंगाली व्याप्त है और वो क्षेत्र अभी भी पारम्परिक तरीके से ही विचारों का आदान-प्रदान कर अपनी अस्मत बचाए हुए हैं ।

कहा जा रहा है कि भारत में सूचना-क्रांति आ गई है । कुछ हद तक यह सही भी है । लेकिन इसका असर गांवों पर कुछ खास नहीं दिखता जिसे हम सूचना क्रांति की संज्ञा दे सकें । सच्चाई यह है कि इसने पहले से ही सूचना समृद्ध लोगों को और भी समृद्ध किया है और सूचना अकाल की स्थिति में रह रहे लोगों की हालत में कोई खास परिवर्तन नहीं आया है ।

संचार माध्यम का एक प्रमुख कार्य है–सूचना देना । एक अनिवार्य सामग्री के रूप में प्रायः प्रत्येक संप्रेषण माध्यम इसे अपना चुका है । आज सूचना की ताकत इतनी बढ़ गई है कि अनेक समाजों में लोगों की स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता में जबर्दस्त कमी आयी है । सूचना-प्रबंध के माध्यम से उन्हें एक पूर्व निर्धारित उद्देश्य पर ले जाना बहुत ही सरल हो गया है । सूचना की यह तानाशाही सिर्फ राष्ट्रीय स्तर पर ही नहीं है बल्कि अपनी सीमाएं लांघकर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक पहुंच चुकी है । इसके अन्तर्राष्ट्रीय प्रभाव तो और भी शक्तिशाली हो गए हैं । दुनिया को एक गांव में बदलने का काम सूचना रूपी राक्षस ने ही किया है । आज दुनिया में जो जातीय सांस्कृतिक उफान आ रहा है उसका कारण है–अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सूचना के ढांचे का केन्द्रित होना ।

सूचना की तीव्रता इतनी तीव्र है कि कनाडा अपनी स्वतंत्र पहचान न बना पाने के लिए अमेरिकी सूचनातंत्र को दोषी ठहरा रहा है और फ्रांस को अपनी वैकल्पिक आर्थिक नीतियों के लिए अमेरिकी सूचनातंत्र पर ही निर्भर रहना पड़ रहा है । इससे विकासशील देशों की स्थिति का सहज अनुमान लगाया जा सकता है ।

सूचनातंत्र निःसंदेह किसी देश की पूरी व्यवस्था पर नियंत्रण कायम कर सकता है । आमतौर पर यह स्वीकार किया जा रहा है कि विकासशील देशों में कुलीन और मध्यम वर्ग ही पश्चिमी मीडिया सामग्री का मुख्य उपभोक्ता है । यही सबकी राजनीति और समाज को भी नियोजित करते हैं । अतः सांस्कृतिक तौर पर इन पर नियंत्रण कर देश की पूरी व्यवस्था को नियंत्रित किया जा सकता है ।

अक्सर आवाजें उठती रहती हैं कि पश्चिमी आधुनिक मीडिया अगर इस तरह अनवरत हमारी संस्कृति पर हावी होता रहा तो हम अपनी सांस्कृतिक पहचान खो सकते हैं । लेकिन अतीत पर एक नजर डालते ही यह डर कम हो जाता है कि इस देश ने हजारों वर्षों की गुलामी झेली है । इन वर्षों में सैकड़ों विदेशी आक्रमण हुए । अनेकों बार हमारी सभ्यता-संस्कृति को उजाड़ने का असफल प्रयास हुआ । लेकिन इस देश की सांस्कृतिक जड़ें जो कि सुदूर गांवों तक फैली हैं, टस से मस न हो सकीं और यह सांस्कृतिक विरासत आज भी हर व्यक्ति के अंतःकरण में मौजूद है । लेकिन जिस गति से विदेशी संचार माध्यमों का हमला हो रहा है उससे अपनी संस्कृति को खतरा जरूर पैदा हो गया है । भारत के गांवों में भी इस खतरे को आसानी से महसूस किया जा सकता है । मनोरंजन के नाम पर जो भी उल-जलूल व विदेशी फूहड़ संस्कृति पर आधारित कार्यक्रम दिखाए जाते हैं उसका ग्रामीण व शहरी संस्कृति पर बुरा असर पड़ता है । अगर समय रहते एक योजना बनाकर इन पर रोक न लगाई गई तो पूर्वजों द्वारा अर्जित हजारों वर्षों की सांस्कृतिक धरोहर का विलोप हो जाएगा ।

आज वीडियो जैसे संचार माध्यम द्वारा भारतीय गांवों को जो चीज (घटिया फूहड़ मनोरंजक कार्यक्रम) दी जा रही है उसका बुरा असर ग्रामीण बेरोजगारों के मानस पटल पर पड़ रहा है । इन कार्यक्रमों को देखने से सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकृतियां पैदा हो रही हैं ।

आवश्यकता इस बात की है कि इन आयातित कार्यक्रमों पर अंकुश लगाया जाए तथा सांस्कृतिक स्वतंत्रता और राष्ट्रीय संस्कृति को मजबूत करने के लिए कार्यक्रमों का सकारात्मक नियोजन किया जाए । सांस्कृतिक प्रभावों और परिणामों को यथार्थ रूप में गांवों तक पहुंचाने के लिए भारतीय परिवेश व संस्कृति को ध्यान में रखकर अपनी भाषा में कार्यक्रम बनाएं और उसका विकेन्द्रीकरण कर गांवों तक पहुंचाएं ।

सामाजिक बदलाव

यह बदलाव प्रक्रिया की अंतिम अवस्था है जब संचार माध्यम द्वारा प्रेषित सूचनाएं विभिन्न अवस्थाओं से गुजरते हुए यहां तक पहुंचती है। यहां यह देखना महत्वपूर्ण है कि बदलाव छोटी अवधि के लिए होता है या लम्बी अवधि के लिए, व्यक्ति या समाज में गुणात्मक परिवर्तन हुए या नहीं।

बदलाव नकारात्मक और सकारात्मक दोनों हो सकता है। लेकिन इतना तय है कि प्रजातांत्रिक शासन व्यवस्था में सामाजिक बदलाव का अर्थ है—'सामाजिक विकास'। जिसका सम्बन्ध सकारात्मक बदलाव से है। 'विकास' शब्द अपने आप में कोई चीज न होकर कई चीजों व परिस्थितियों का योग है। संचार माध्यम की कृपा से अगर किसी समाज के लोगों के स्वास्थ्य में सुधार हुआ हो, कृषि उत्पादकता में बढ़ोत्तरी हुई हो, लोगों का शैक्षिक स्तर ऊंचा उठा हो तो हम कहते हैं कि वहां विकास हुआ है।

एक खास लक्ष्य निर्धारित कर सूचना तंत्रों का इस्तेमाल करने पर वांछित बदलाव (सकारात्मक) प्रायः निश्चित होता है। इस तरह किसी समाज में अगर कई बदलाव आते हैं तो वह सामाजिक विकास कहा जा सकता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि संचार माध्यम विभिन्न अवस्थाओं से गुजरते हुए किस तरह शांत ग्रामीण वातावरण में प्रवेश कर भोले-भाले ग्रामीणों को अपने निर्धारित लक्ष्य की ओर आकर्षित करता है, सोचने-समझने पर मजबूर करता है, उनके विभिन्न तरीकों में परिवर्तन लाता है और शैक्षिक, आर्थिक, सामाजिक व नैतिक स्तर को ऊंचा कर अंततः सामाजिक विकास कर डालता है।

सी-41, रीडर्स लाईन्स
दिल्ली विश्व विद्यालय
दिल्ली-7

निरक्षरता से मुक्ति का अभियान

□ शैलेन्द्र □

आजादी के 44 साल बाद भी हमारे देश में लगभग साढ़े बत्तीस करोड़ लोग अनपढ़ हैं जबकि 1948 की मानवाधिकार घोषणा में कहा गया था कि शिक्षा मौलिक अधिकार है। शिक्षा ग्रहण करने के लिए साक्षर होना जरूरी है। राष्ट्र के विकास के लिए साक्षरता को अनिवार्य समझने वाले ज्ञानी लोग भी जानते हैं कि आज भी अपने देश में प्रत्येक दस में से छह व्यक्ति अभी भी अनपढ़ हैं और प्रत्येक चार में से तीन महिलायें लिखना-पढ़ना नहीं जानतीं।

गरीबों व समाज के कमजोर वर्गों के लिए संचालित सरकारी कार्यक्रम इसलिए भी सफल नहीं हो पाते क्योंकि लोगों को उनका पता ही नहीं चल पाता। वे लिखना-पढ़ना जानते ही नहीं तो उन्हें पता कैसे चले ? उनकी निरक्षरता के कारण भी भ्रष्टाचार को प्रश्रय मिलता है। महिला की शिक्षा का सीधा संबंध उसके बच्चों के सुखी जीवन से है। अपने बच्चे को रोगों से बचाव के टीके लगवाने की बात समझना तथा सीमित परिवार के महत्व को समझकर उसके लिए तरीके अपनाने की समझ भी उसके शिक्षित होने पर निर्भर करती है। देश के सर्वोत्तम संसाधन तो यहां के मानव ही हैं। जब अधिकांश लोग देश की मुख्यधारा से कटे रहेंगे तब देश प्रगति कैसे करेगा ? राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने भी बार-बार कहा था कि करोड़ों लोगों का निरक्षर रहना भारत के लिए कलंक और अभिशाप है। इससे मुक्ति पानी ही होगी। आजादी के बाद प्रौढ़ शिक्षा, अनिवार्य शिक्षा आदि के कई कार्यक्रम चलाये गये मगर आशा के अनुरूप सफलता नहीं मिली क्योंकि अधिकांश कार्यक्रम कागजों में ही चलते रहे।

युगांतरकारी कदम

देश को तेजी से आगे बढ़ाने के साथ सत्ता में आये युवा प्रधानमंत्री स्वर्गीय श्री राजीव गांधी ने इसके महत्व को समझा और इस ओर विशेष ध्यान दिया। केन्द्रीय सरकार के संगठनात्मक इतिहास में सितम्बर, 1985 में मानव संसाधन विकास मंत्रालय का सृजन एक युगान्तरकारी कदम था। यह उस प्रारंभिक विचारधारा की संस्थागत विशेषता को प्रमाणित करता है कि देश के लोगों को एक अत्यन्त मूल्यवान संसाधन के रूप में देखा जाना चाहिए। नयी शिक्षा नीति बनाने के अलावा मई 1988 में उन्होंने साक्षरता दीप प्रज्जवलित कर "राष्ट्रीय साक्षरता मिशन" के जन अभियान का शुभारम्भ किया। श्री राजीव गांधी द्वारा यह साक्षरता अभियान को जन-जन तक ले जाने की शुरुआत थी। इसमें लक्ष्य निर्धारित करने और नियत समय में उसे पूरा करने के साथ ही समाज के सभी वर्गों की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करने पर बल दिया गया।

इतना ही नहीं सातवीं पंचवर्षीय योजना की प्रस्तावना में तत्कालीन प्रधानमंत्री स्वर्गीय राजीव गांधी ने कहा कि विकास का संबंध केवल कल-कारखानों, बांधों व सड़कों से नहीं है। इसका संबंध बुनियादी तौर पर लोगों के जीवन से है। इसका लक्ष्य है लोगों की भौतिक सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक उन्नति। मानवीय पक्ष तथा उससे जुड़ी हुई बातें सबसे महत्वपूर्ण हैं। शिक्षा मानव के विकास का एक बहुत जरूरी अंग है। यह अपनी बातों को दूसरों तक पहुंचाने का, नयी बातें सीखने का और ज्ञान-विज्ञान के आदान-प्रदान का अत्यन्त जरूरी साधन है। साक्षरता व्यक्ति की उन्नति तथा राष्ट्र के उत्थान की पहली शर्त है। साक्षरता मिशन तकनीकी व सामाजिक मिशन है जिसके माध्यम से विज्ञान व तकनीक के लाभ आम लोगों को सुलभ कराये जायेंगे।

वातावरण का निर्माण

श्री राजीव गांधी द्वारा किये गये आह्वान तथा एर्नाकुलम में जन अभियान द्वारा प्राप्त सफलता एवं अंतर्राष्ट्रीय साक्षरता वर्ष में प्रदत्त अवसरों को ध्यान में रखते हुए विभिन्न स्तरों पर उपलब्ध राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के तंत्र को निरक्षरता के विरुद्ध भारी युद्ध करने के लिए प्रेरित किया गया। भारत ज्ञान-विज्ञान समिति ने 1990 में सारे देश में एक जत्था घुमाकर माहौल बनाने में बहुत ही प्रेरणादायक भूमिका निभाई। लाखों स्वयंसेवक इस कार्य से जुड़े। अभियान में गतिशीलता आयी और साक्षरता का महत्व लोगों की समझ में आने लगा।

देश के प्रमुख जिलों के जिलाधीशों की बैठकें आयोजित कर साक्षरता अभियान के लिए जिलों का चयन किया गया। एर्नाकुलम में केरल शास्त्र साहित्य परिषद् व शासन ए

स्वयंसेवी संगठनों के लगभग डेढ़ लाख लोगों के सहयोग के साथ 26 जनवरी, 1989 को साक्षरता अभियान शुरू हुआ और 4 फरवरी, 1990 को पूरा जिला साक्षर घोषित हो गया। उसी दिन से पूरे केरल राज्य में पूर्ण साक्षरता अभियान शुरू हुआ। साथ ही दक्षिण कन्नड़ व बीजापुर (कर्नाटक), पांडिचेरी, मिदनापुर व बर्धमान (पश्चिम बंगाल) एवं चित्तूर व बेल्लूर (आंध्र प्रदेश) में भी यह अभियान शुरू हुआ। केरल राज्य पूर्ण साक्षर घोषित हो चुका है। आज 12 राज्यों के लगभग 70 जिलों में सघन साक्षरता अभियान चल रहा है।

समय सीमा के अंतर्गत लक्ष्य प्राप्त करने की बाध्यता, इसके लिए समर्पित कार्यकर्त्ताओं की टोलियां तथा अभियान को स्थानीय समस्याओं से जोड़ने की कला पर अमल ने अभियान को सफलता की सीढ़ी तक पहुंचने में मदद की है। साक्षरता का संदेश, उसकी उपयोगिता जन-जन तक पहुंचाने का निरन्तर प्रयास जिन क्षेत्रों में नहीं हो रहा है उन क्षेत्रों में अज्ञान का अंधकार दूर करने की दिशा में किया जा रहा कोई भी प्रयास आज भी सफल नहीं हो रहा है। बेल्लूर व चित्तूर में बंधुआ मजदूरी और न्यूनतम वेतन की समस्या के निदान में साक्षरता के महत्व की बात समझ में आने पर सफलता मिली तो लातूर (महाराष्ट्र) में वारानी भूमि पर खेती कैसे की जाये—यह ज्ञान प्रदान करने का लाभ साक्षरता अभियान से मिला। स्थानीय व सामाजिक समस्याओं से अभियान को जोड़ने में नुक्कड़ नाटक, संगीत व नृत्य का महत्वपूर्ण योगदान है मगर जब तक घर-घर में इसकी लगातार चर्चा न हो तब तक इसका तात्कालिक लाभ लोगों की समझ में नहीं आता। साक्षर बनाने वाले शिक्षकों की समझ में जहां यह बात आ गयी है कि सभी के साक्षर होने से सबके साथ उनका जीवन स्तर भी सुधरेगा, वहां आशातीत सफलता मिली है।

ज्ञान की पिपासा

इस कार्य के लिए गांव, ब्लाक, जिला व प्रदेश स्तर पर राजनीतिक इच्छा शक्ति व समर्पित कार्यकर्त्ताओं की समन्वित संगठन शक्ति की आवश्यकता है। लोगों के दिल में यह न हो कि अफसर दौरे पर आये हैं। खानापूर्ति कर चले जायेंगे। उनको यह अनुभूति होनी चाहिए कि वे उनकी समस्या के समाधान में मददगार हैं।

आठवीं पंचवर्षीय योजना में देश के साढ़े चार सौ में से साढ़े तीन सौ जिलों को साक्षर बनाने का कार्यक्रम है। अभी तक देश के केवल 24 जिले पूर्ण साक्षर घोषित हुए हैं।

जो जिले पूर्ण साक्षर घोषित हो गये हैं उनमें सतत् शिक्षा की आवश्यकता है। यह ठीक है हमारे कई भाई अंगूठा टेक होने की कुण्ठा से मुक्त होकर तथा हमारी कई बहनें पत्र लिखने में सक्षम होकर ही बहुत खुश हैं। मगर बहुत सारे ऐसे भी लोग हैं जिनके ज्ञान की भूख साक्षरता ने जगायी है। शिक्षा का महत्व उनकी समझ में आया है। इससे उन्हें अपने अधिकार व कर्त्तव्य की जानकारी मिली है। शोषण, भ्रष्टाचार व ठगी से बचने में वे सक्षम हो गये हैं।

भारत सरकार ने उत्तर साक्षरता व सतत् शिक्षा के भी कई कार्यक्रमों पर अमल करना शुरू कर दिया है जिसका उद्देश्य यह देखना है कि नव साक्षर सब कुछ भूल-भुलाकर कहीं पुनः निरक्षरों की जमात में शामिल न हो जायें इसलिए उन्हें व्यापक जगत की गतिविधियों की जानकारी मिलती रहे। इस ज्ञान के आधार पर वे देश के विकास की गतिविधियों में भागीदार बनें। इन कार्यक्रमों में जीवन स्तर में सुधार के साथ उनकी आर्थिक व सामाजिक उन्नति भी शामिल है। उनकी कार्यक्षमता व कार्यकुशलता बढ़ाने वाले कार्यक्रम भी हैं। जन शिक्षण निलयम के माध्यम से ग्रामीण व्यवहारिक साक्षरता परियोजना भी चलायी जा रही है।

केन्द्र सरकार ने अध्ययन परिणाम मूल्यांकन तथा प्रभाव मूल्यांकन एवं निरन्तर निगरानी की ऐसी पद्धति विकसित की है जो सरल, शंका-रहित व विश्वसनीय बन गयी है। पाठ्य पुस्तकों में स्वयं मूल्यांकन करने का पाठ भी शामिल है।

कई उच्च कोटि की उत्प्रेरक फिल्में तथा वीडियो कार्यक्रम तैयार कर देश भर में प्रसारित किये गये हैं। साक्षरता अभियानों पर वृत्त चित्रों की शृंखला व धारावाहिक आदि भी तैयार किये गये।

बिहार

प्राकृतिक सम्पदा में सर्वाधिक धनवान राज्य बिहार साक्षरता के क्षेत्र में भी देश में सबसे पिछड़ा हुआ है। विडम्बना यह है कि अभी तक इस राज्य में इस ओर ध्यान भी नहीं दिया जा रहा है।

1991 की जनगणना के अनुसार साक्षरता दर की सूची में केरल का 90.59 प्रतिशत है जबकि बिहार का 38.54 प्रतिशत है। केरल के बाद क्रमशः मिजोरम, लक्षद्वीप, चण्डीगढ़, गोवा, दिल्ली, पांडिचेरी, अण्डमान व निकोबार द्वीप समूह, दमन व दीव, तमिलनाडु, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र, नगालैंड, मणिपुर, गुजरात, त्रिपुरा, पश्चिम

बंगाल, पंजाब, सिक्किम, कर्नाटक, हरियाणा व असम है जिनकी साक्षरता दर की औसत 53.42 प्रतिशत या इससे अधिक है ।

साक्षरता दर का राष्ट्रीय औसत 52.11 प्रतिशत है । उड़ीसा, मेघालय, आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, अरुणाचल प्रदेश, दादरा व नागर हवेली, राजस्थान और बिहार क्रमशः राष्ट्रीय औसत दर से नीचे हैं । अत्यन्त खेद की बात है कि इन राज्यों में साक्षरता अभियान भी जोर नहीं पकड़ पा रहा है क्योंकि इस ओर किसी का ध्यान ही नहीं है ।

पंजाब, जम्मू-कश्मीर व असम में स्थिति का अवलोकन किया जा रहा है । इस बीच तमिलनाडु व कर्नाटक में अभियान तेज है शेष सभी अभी होड़ में पीछे चल रहे हैं ।

लक्ष्य

राष्ट्रीय साक्षरता अभियान का लक्ष्य 1995 तक 15 से 35 के बीच की उम्र के तेरह करोड़ व्यक्तियों को साक्षर बनाना है । फिलहाल दस लाख से अधिक छात्र भी इस अभियान से जुड़े हुए हैं ।

डॉ० जाकिर हुसैन व्याख्यान माला के अंतर्गत साक्षरता मिशन के महानिदेशक डॉ० मिश्र ने ठीक ही कहा था कि निरक्षर व शिक्षा से वंचित लोगों के प्रति आज नया दृष्टिकोण अपनाने की जरूरत है । गरीब लोगों का जीवन आज सभी तरह की नकारात्मक ताकतों से घिरा है । उन्हें अपने किसी अस्तित्व के प्रति कोई जागरूकता ही नहीं है । वे एक खास तरह की जड़ता के शिकार हो गये हैं और अपने बाद दरवाजों के बाहर की सारी संभावनाओं के प्रति निराश हैं ।

लेखक को भी कुछ साक्षर जिलों में नव साक्षरों से बात करने का मौका मिला है । यह सही है कि साक्षरता यह जड़ता तोड़ती है और इन तमाम वंचित लोगों को निराशा से मुक्त करती है । उनमें अजीब किस्म का आत्मविश्वास उत्पन्न हो जाता है और उनका चेहरा खिल जाता है। उनकी इच्छा-शक्ति प्रबल हो जाती है और उनमें बेहतर जीवन जीने की लालसा जगती है ।

लोकतंत्र में संविधान में दिये गये मताधिकार का सही उपयोग भी लोग तभी निडर व निष्पक्ष होकर कर सकते हैं जब वे अधिकार के उपयोग के परिणाम की विवेचना करने में सक्षम हों । आज दुर्भाग्य यह है कि अधिसंख्यक वंचित लोग विकास कार्यक्रमों के सीधे लाभार्थी होते हुए भी उन्हें केवल निष्क्रिय नजरों से देखते रहते हैं । उनका लाभ वे नहीं ले पाते बल्कि चन्द सुविधा भोगी लोग इसका लाभ उठा जाते हैं । साक्षरता उन्हें सीधी भागीदारी के योग्य बना सकती है ।

नयी समझ

स्वामी विवेकानन्द ने कहा था कि शिक्षा हमें तमाम बंधनों, अंधविश्वासों और कुरीतियों से मुक्त करेगी और नयी समझ के साथ नयी दृष्टि का निर्माण करेगी । शिक्षा आदमी का विकास है । कठोपनिषद् में कहा गया कि "अज्ञान के अंधकार में भटकते हुए लोग सिर्फ भटकते ही रहते हैं ।" अभी कोई बारह साल पूर्व ब्राजील के शिक्षाविद् पाउलो फ्रेरे की समझ में आया कि उसके देश की गरीबी का कारण सत्ता तथा तंत्र का दुरुपयोग है । तब उन्होंने शिक्षा का जो सिद्धान्त प्रतिपादित किया उसे "आदमी की आजादी के लिए किया गया सांस्कृतिक कर्म" कहा । उनका कहना है कि शिक्षार्थी कभी निष्क्रिय दर्शक नहीं रहेंगे बल्कि सीखने व रचने के सुख से वे नया हौसला पा सकेंगे । दुनिया के कई देशों में चलाये गये साक्षरता आंदोलनों का भी यही निचोड़ है कि निरक्षरता का सीधा संबंध निर्धनता तथा सामाजिक विषमता से है ।

सबके लिए शिक्षा आज एक राष्ट्रीय वचनबद्धता है । प्रत्येक साक्षर व्यक्ति से कम से कम एक निरक्षर व्यक्ति को साक्षर बनाने की अपील की जा रही है । सभी देशवासी मिलकर ही शिक्षा से संपूर्णता की ओर बढ़ सकते हैं । वर्तमान प्रधानमंत्री श्री पी०वी० नरसिंह राव मानव संसाधन विकास मंत्री रह चुके हैं । वैसे भी शिक्षा के क्षेत्र में शुरू से उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा है । श्री नरसिंह राव और वर्तमान मानव संसाधन विकास मंत्री श्री अर्जुन सिंह से मिल रहे प्रोत्साहन के कारण साक्षरता कार्यकर्त्ता बहुत जोश व लगन से काम कर रहे हैं । वैसे भी ये समर्पित कार्यकर्त्ता साक्षरता प्रदान करने को साधारण काम नहीं मानते । बहुत से कार्यकर्त्ता तो लोगों के साथ ही उनके गांवों में रहते हैं । वे किसी भी समस्या को जन सहयोग से हल करने को तत्पर रहते हैं । उनमें कई तो साक्षरता के प्रति इतने दृढ़ संकल्प व निष्ठावान हैं कि वे भीतर और बाहर के झंझावातों का सामना करते हुए बड़ी लगन से कार्यरत हैं और अपने उद्देश्य से कभी विचलित नहीं होते । युवा कार्यकर्त्ताओं के लिए विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रम भी चलाया जा रहा है । राष्ट्रीय छात्र सैनिक दल, राष्ट्रीय सेवा योजना, नेहरु युवक केन्द्र, भारत स्काउट व गाइड, श्रमिक संगठन, सशस्त्र सैनिक जैसे कतिपय संगठन इस मिशन में लगे हैं ।

निरन्तर शिक्षा की अभिकल्पना के अंतर्गत लगभग हर पांच हजार की जनसंख्या पर एक "जन शिक्षा निलयम्" स्थापि

किया जा रहा है जिसमें सायंकालीन कक्षाओं, पुस्तकालय, वाचनालय, वाद-विवाद प्रतियोगिता, रेडियो, टी०वी०, खेलकूद, सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि की व्यवस्था होगी । मालिक-मजदूर संगठनों, विश्वविद्यालय कालेजों व पालीटेक्निक आदि का निरन्तर उपयोग कर साक्षरता को जीवनोपयोगी बनाया जा रहा है । इसमें कई जिलों में नये तकनीकी निवेश का भी प्रावधान है ।

साक्षरता की ओर हमारी लम्बी यात्रा अभी अभियान के रूप में ही शुरू हुई है । इसे जन आंदोलन का रूप देना होगा । साक्षरता को जन-जन तक अर्थात् निरक्षरों की ड्योढ़ी तक पहुंचाना होगा । अडिग इच्छा शक्ति (खासकर राजनीतिक व प्रशासनिक) तथा दृढ़संकल्प के साथ मिशन की भावना व समर्पण वृत्ति ही इस कार्यक्रम को सफल बना सकती है । ग्रामीण क्षेत्रों में लगाने के लिए उपलब्ध सीमित पूंजी व अन्य संसाधनों के अभाव की पृष्ठभूमि में विकास का प्रबल साधन साक्षरता ही है, जो हमारी जन शक्ति के व्यापक संसाधनों को राष्ट्र के विकास में लगा सकती है ।

साभार
पत्र सूचना कार्यालय

साक्षरता

□ सुश्री अनुराधा शर्मा □

देश-देश में
गाँव-गाँव में,
हो साक्षरता का अभियान ।।
छोटे-बड़े और,
बूढ़े-बुजुर्ग,
ले इस नव-गीता का ज्ञान ।।
यदि समझे–समझायें अर्थ,
तो घट जाये अज्ञान,
हो साक्षरता का अभियान ।।
सा, से होवे 'सावधान'
अ, से मिटे 'अज्ञान'
क्ष, से बने 'क्षमता सी शिक्षा'
र, से मिलें, राम-रहमान,
आओ सब मिल हाथ-बटायें,
पूर्ण करें साक्षरता-अभियान ।।
ले सब इस नव-गीता का ज्ञान ।।

द्वारा, श्री रविन्द्र शर्मा,
स्टेट बैंक के पास, बाजार नं० 1
रामगंज मंडी, जिला कोटा (राज.)

प्रचार माध्यमों का ग्रामीण विकास पर प्रभाव

□ सुन्दरलाल कुकरेजा □

आधी शताब्दी पहले के भारतीय गांवों की स्मृति अब केवल कुछ वयोवृद्ध बुजुर्गों की यादगार बनकर रह गई है। पिछले कुछ वर्षों में गांवों की स्थिति में काफी परिवर्तन आया है। यह बदलाव धीरे-धीरे आता रहा, इसलिए यह कहना तो शायद आसान नहीं कि गांव का स्वरूप कब से बदला, लेकिन अगर स्वतंत्रता प्राप्ति के समय के गांवों और ग्रामीणों की दशा की तुलना आज के दृश्य से करें तो कहना होगा कि ग्रामीण जगत का कायापलट हो गया है। उस समय जिन बातों की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी, आज वही बातें ग्रामीण जीवन के यथार्थ और अनिवार्य, अभिन्न अंग बन चुके हैं। ग्रामीण जीवन के यथार्थ और अनिवार्य, अभिन्न अंग बन चुके हैं। इस कायाकल्प में विकास कार्यक्रमों, शिक्षा, आदि का बहुत बड़ा हाथ रहा है, किन्तु इस परिवर्तन का सबसे बड़ा उत्प्रेरक, प्रचार माध्यम रहा है। आकाशवाणी और दूरदर्शन के कार्यक्रमों ने समाज में नई चेतना, नया उत्साह और नया ज्ञान उत्पन्न करने में उल्लेखनीय योगदान दिया है।

आकाशवाणी, दूरदर्शन और काफी सीमा तक समाचार पत्रों और कुछ अंश तक पत्रिकाओं ने ग्रामीण जीवन को प्रभावित किया है और उसमें आधुनिकता के ऐसे विचारों का बीजारोपण किया जिनसे गांवों का पिछड़ापन दूर करने में सहायता और प्रेरणा मिली। जहाँ अशिक्षा, अज्ञान और अनभिज्ञता का घोर अंधकार और उससे जुड़े अन्धविश्वासों का वास था, वहाँ इन प्रचार माध्यमों ने ज्ञान का प्रकाश किया और गांवों को घोर उपेक्षित दीन हीन और दरिद्रता की अवस्था से निकाल कर विकास और प्रगति के मार्ग पर चलने का उत्साह प्रदान किया। गांवों की प्रगति के लिए सरकारी और गैर सरकारी स्तर पर जितने भी कार्यक्रम चलाए गए, उनकी जानकारी और उनसे लाभ उठाने की प्रेरणा इन्हीं माध्यमों से मिली। ये प्रचार माध्यम ग्रामीण जनता के लिए ऐसे प्रकाश स्तम्भ बन गये जिनके मार्गदर्शन में वह सही रास्ता खोजने में सफल हो गये।

प्रचार माध्यमों से प्राप्त जानकारी के आधार पर गांव वासियों को न केवल नए मार्गों, नए तरीकों और नई पद्धति की जानकारी मिली, बल्कि उन्हें यह भी अहसास हुआ कि अब तक वे जिस रास्ते पर चले आ रहे थे, उसमें कांटे ही अधिक थे, विकास और विस्तार की संभावनाएं लगभग समाप्त हो गई थीं और उस रास्ते में जगह-जगह ऐसे व्यवधान थे जो उनकी जीवन यात्रा को ही अवरुद्ध कर रहे थे। खेती के पुराने तरीके, सामाजिक कुरीतियाँ, अन्धविश्वास, नए आविष्कारों के प्रति उदासीनता, अशिक्षा और निरक्षरता उनके जीवन के ऐसे अभिशाप थे, जिनके कारण गांवों का जीवन ठहर सा गया था। उसमें कोई हलचल, कोई उत्साह और नयापन नहीं रह गया था। लेकिन प्रचार माध्यमों ने गांवों में नई राह दिखाई, उनमें कुछ नया कर दिखाने, कुछ नया अपनाने और जीवन में आगे बढ़ने की संभावना जगाई और उनके जीवन में आए ठहराव में नई गति प्रदान की। विज्ञान के नए आविष्कार, खेती के नए तरीके, गांव के वातावरण में सुधार, सामाजिक विकृतियों का त्याग, अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार और बच्चों एवं महिलाओं के प्रति उनके दृष्टिकोण में परिवर्तन लाने में प्रचार माध्यमों ने जितना योगदान दिया, और उनका जितना असर हुआ उतना शायद किसी एक और कारण का नहीं पड़ा।

भारतीय गांवों की स्थिति में इन प्रचार माध्यमों ने जो परिवर्तन पैदा किया है, उससे अनेक लाभ तो हुए हैं, पर उनके कारण गांव वालों के मन में जो नया ज्ञान, नया उत्साह, कुछ कर दिखाने की तमन्ना और नई आकांक्षाएं व अपेक्षाएं पैदा हुई हैं; उनकी पूर्ति न होने से नई समस्याएं भी पैदा हो रही हैं। इन माध्यमों के प्रभाव में आकर पुराने ढंग और व्यवस्थाएं तो छूटने लगी हैं, किन्तु उनके स्थान पर नई व्यवस्था अभी स्थापित नहीं हो पाई है। गांवों में नएपन के साथ आधुनिकता की लहर तो चल पड़ी है, किन्तु गांव को शहर बनाने की होड़ में वह न गांव रह गए हैं, न शहर बन पा रहे हैं। उन्हें इस दुविधा से बचाने और गांव की पुरानी नींव पर ही नया निर्माण करने की आवश्यकता की ओर भी ध्यान दिया जाना आवश्यक है।

ऐसा नहीं है कि गांवों में विकास और प्रगति की उत्साहवर्धक कथाएं और घटनाएं नहीं होतीं। घोर अभाव में भी भारतीय

ग्रामीण अपने वैयक्तिक और सामाजिक मूल्यों को संजो कर रखते हैं और ऐसे अनुकरणीय कर्म कर जाते हैं जो दूसरों के लिए आदर्श बन सकते हैं । लेकिन सबसे बड़ी समस्या यह थी कि शिक्षा के अभाव में उन कार्यों की जानकारी अन्य लोगों को नहीं मिल पाती थी । अब प्रचार माध्यमों ने इस काम को आसान बना दिया है । अब आकाशवाणी पर इस तरह के प्रशंसनीय कामों का विवरण देश भर में सुना जा सकता है और दूरदर्शन के पर्दे पर उसे प्रत्यक्ष देखा भी जा सकता है । अब अन्य उत्साही, लेकिन मार्गदर्शन के अभाव से ग्रस्त ग्रामीण ऐसी घटनाओं से प्रेरित होकर अपने और अपने गांव के विकास के लिए काम करने को प्रेरित हो रहे हैं ।

गांवों का कायाकल्प

प्रचार माध्यमों ने गांवों का कायाकल्प कर दिया है । इनका सबसे बड़ा योगदान तो विकास की आवश्यकता के बारे में जनचेतना जागृत करने में है लेकिन अपने विभिन्न कार्यक्रमों द्वारा इन माध्यमों ने साक्षरता के प्रसार, जनसंख्या नियंत्रण की आवश्यकता, प्रदूषण की रोकथाम, रोजगार के अवसर बढ़ाने, कृषि के नए व आधुनिक तरीकों के इस्तेमाल, बच्चों व महिलाओं की स्थिति में सुधार और समाज के प्रति उनकी अधिक सार्थक भूमिका के प्रति चेतना जगाने, एवं पशुपालन आदि द्वारा गांवों की आर्थिक स्थिति को संवारने में भी अद्भुत भूमिका निभाई है । गांवों में स्वास्थ्य सम्बन्धी चेतना जगाने, बीमारियों की रोकथाम, किसानों की फसल के सही मूल्य तय कराने, सड़कों के विकास, पंचायत प्रणाली को मजबूत बनाने, रुढ़ियों और अंधविश्वासों को मिटाने और गांव वालों को पर्यावरण की रक्षा करते हुए भी खुद अपने पैरों पर खड़ा होने की प्रेरणा देने में भी इन माध्यमों का योगदान कम नहीं रहा है ।

प्रचार माध्यमों ने केवल ग्रामीणों को ही आगे बढ़ने में सहायता नहीं दी है, बल्कि समाज और सरकार के अन्य वर्गों को भी इसके लिए विवश कर दिया है कि वे इस वर्ग की समस्याओं को ठीक प्रकार से समझें और उनके निदान के लिए प्रयास करें । उदाहरण के लिए, किसानों की उपज बढ़ाने के लिए नई तकनीकों और उपकरणों का उपयोग न केवल किसान के निजी हित के लिए अच्छा है, अपितु कृषि पर आधारित उद्योगों के भी लाभ में है, यह बात अब तेजी से अनुभव की जाने लगी है और वैज्ञानिक व तकनीकी शोध किसानों की समस्याओं व कठिनाइयों को हल करने पर भी केन्द्रित होने लगी है ।

इसी का परिणाम है कि अब कृषि पर आधारित उद्योग धन्धे तेजी से पनपने लगे हैं । जिस काम में अभी तक केवल ग्रामोद्योग आयोग ही अकेले प्रयास कर रहा था, उसमें अनेक निजी प्रयास भी होने लगे हैं । इससे गांवों में रोजगार के अवसर भी बढ़े हैं और गांवों की आर्थिक स्थिति में भी सुधार आया है ।

प्रचार माध्यमों ने एक और ढंग से भी देश के ग्रामीण विकास को प्रभावित किया है । देश में ऐसे लोगों की संख्या काफी बड़ी है जो स्वयंसेवा द्वारा दूसरों की मदद करना चाहते हैं । अभी तक जानकारी के अभाव में ऐसे लोगों के प्रयास कुछ बड़े नगरों, या कस्बों तक ही सीमित हो कर रह जाते थे । गांवों की दयनीय दशा और वहाँ काम करने की आवश्यकता की ओर जबसे प्रचार माध्यमों ने ध्यान देना शुरु किया है, इन स्वैच्छिक और गैर सरकारी संस्थाओं को भी अपने कार्य के विस्तार के लिए काफी व्यापक क्षेत्र मिल गया है । स्वयंसेवी संस्थाएं, अब गांवों की ओर मुड़ने लगी हैं । नगरों के धनी लोग अब गांवों के प्रति अपनी जिम्मेदारी को अधिक गम्भीरता से महसूस करने लगे हैं । ग्रामीण जीवन पर इस नई चेतना का भी असर दिखाई दे रहा है ।

सरकारी अफसर और कर्मचारी भी, जिन पर गांव के विकास की जिम्मेदारी है, इन प्रचार माध्यमों के कारण अपने कर्त्तव्य के प्रति अधिक सचेत हो गये हैं । ग्रामीण विकास के किसी भी क्षेत्र में मिली उपलब्धि और उसका प्रचार न सिर्फ क्षेत्र के ग्रामीणों को प्रोत्साहित करता है, अपितु वह उपलब्धि प्राप्त करने वाले कर्मचारियों को भी कुछ कर दिखाने की संतुष्टि और आनन्द प्रदान करता है । दूसरी ओर, अपने कर्त्तव्य के प्रति उपेक्षा और उदासीनता बरतने वाले कर्मचारियों को भी अपना कर्त्तव्यबोध होता है, अन्यथा उन्हें नवजागृत ग्रामीणों के कोप और जनता की आलोचना का शिकार बनना पड़ता है ।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, गांवों में नई जागृति आने से पुरानी रुढ़ियां और व्यवस्थाएं टूटने लगी हैं, लेकिन नई व्यवस्था अभी स्थिर नहीं हो पाई है । गांवों की नई समस्या शहरों की नकल की बढ़ती प्रवृत्ति है । आधुनिकता के प्रवेश के साथ-साथ पुराने, पुश्तैनी धन्धे और कारोबार व उनसे जुड़ी सामाजिक व्यवस्था भी खत्म होने लगी है । लेकिन उसका कोई विकल्प नहीं बन पाया है । दो तीन दशक पहले तक ग्रामीण केवल आकाशवाणी से समाचार या कुछ मनोरंजक कार्यक्रम

सुनकर गद्‌गद् हो जाते थे । यह कार्यक्रम भी सामूहिक रूप से, चौपाल, पंचायतघर या किसी मुखिया के आंगन में सुने जाते थे । फिर घर-घर ट्रांजिस्टर बजने लगे और अब उनकी जगह दूरदर्शन आ गया है । लेकिन बिजली की कमी के कारण न दूरदर्शन देखा जा सकता है, न खेतों में सिंचाई हो पाती है । गांवों में साक्षरता के प्रयास में इन माध्यमों ने जो सफलता अर्जित की, उसका पूरा लाभ उठाने के लिए गांवों में शिक्षा के साधनों-स्कूलों, उपकरणों और शिक्षकों का अभी तक अभाव है । अतः गांवों में अनौपचारिक और उनके दैनिक जीवन से जुड़ी व्यावहारिक शिक्षा के प्रसार की आज और भी अधिक आवश्यकता है ।

प्रचार माध्यमों के प्रचार का ही परिणाम है कि गांव में महिलाएं अब केवल मजदूरनी नहीं रह गई हैं, अपितु घर और बाहर उनका बराबरी का दर्जा है । बढ़ती आबादी अब सिर्फ 'भगवान की देन' नहीं मानी जाती । परिवार कल्याण में, परिवार को सीमित रखने की भावना जगाने में स्वास्थ्य केन्द्रों की सुविधाओं का जितना हाथ है, उसका बहुत कुछ श्रेय ऐसी भावना जगाने के लिए किए गए प्रचार को है । इसी प्रचार के कारण गांव में धीरे-धीरे लड़की और लड़के के बीच भेदभाव मिटता जा रहा है और लड़कियां भी काफी संख्या में स्कूलों में जाने लगीं हैं ।

घरों में महिलाएं अब चूल्हे के धुएं और घुटन भरे वातावरण में अपना स्वास्थ्य खराब होने के प्रति अधिक सचेत हैं, इसलिए वे उन्नत चूल्हे, सौर ऊर्जा और गोबर गैस के उपयोग के प्रति उत्सुक हैं । पीने के पानी को साफ रखने, बच्चों को समय पर टीके लगवाने और रोगों की रोकथाम के प्रति उनमें अधिक जागरुकता है । इससे न केवल उनका जीवन स्तर सुधरा है, अपितु पर्यावरण की सुरक्षा और प्रदूषण की रोकथाम में भी मदद मिली है ।

प्रचार माध्यमों ने ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक और राजनीतिक चेतना जगाने में सबसे अधिक भूमिका निभाई है । दहेज, बाल-विवाह, नीम हकीमों में आस्था, छुआछूत, लड़कियों के प्रति दुर्व्यवहार आदि कुरीतियों के विरुद्ध इन माध्यमों ने जम कर जनमत तैयार किया है । दूसरी ओर समाज के कमजोर और पिछड़े वर्गों को उनके अधिकार दिलाने, भूमि सुधार लागू करने, पंचायती राज व्यवस्था को मजबूत करने, अनुसूचित जातियों व जनजातियों तथा आदिवासियों को शोषण से मुक्ति दिलाने में भी इन माध्यमों ने काफी योगदान किया है । आकाशवाणी, दूरदर्शन और समाचार पत्र-पत्रिकाओं के कार्यक्रम हों, धारावाहिक हों अथवा विज्ञापन, सभी में ग्रामीण क्षेत्र के सुन्दर पहलुओं को उजागर करने और विकृतियों को त्यागने का सन्देश सन्निहित रहता है ।

लेकिन कुल मिलाकर ऐसा लगता है कि प्रचार माध्यमों ने ग्रामीण समाज को, और काफी सीमा तक सम्पूर्ण समाज को उसकी निद्रा से जगाकर अपने वातावरण के प्रति सचेत और जागृत तो कर दिया है, किन्तु तन्द्रा त्याग कर उठ खड़ा हुआ समाज अपने आसपास विकास और सुविधाओं का वह स्तर और संभावनाएं नहीं देख रहा जिनकी उसमें आकांक्षा जागी हैं । सरकार और समाज ने यद्यपि विकास के लाभ गांवों तक पहुंचाने के भरसक प्रयास किये हैं, फिर भी आम ग्रामीण उनके प्रति सजग होते हुए भी उनसे वंचित नजर आता है । इससे एक कुंठा की भावना पैदा हो सकती है । इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि एक ओर ग्रामीण समाज को उसके अधिकारों और कर्त्तव्यों का बोध कराया जाये और दूसरी ओर विकास की गति में ऐसी तेजी भी लाई जाये जिससे लाभान्वित होने के साथ-साथ ग्रामीण उसमें अपना अंशदान भी कर सकें ।

विशेष संवाददाता, दैनिक हिन्दुस्तान
बी-7, प्रेस एन्क्लेव, साकेत
नई दिल्ली-110 017

साक्षर का लक्ष्य : निरक्षर बने साक्षर

□ डॉ० गजेन्द्रपाल सिंह □

भारतीय अर्थव्यवस्था ग्रामीण अर्थव्यवस्था है । महात्मा गांधी के शब्दों में भारत गांवों का देश है जिसकी आत्मा गांवो में निवास करती है । देश की कुल जनसंख्या का लगभग 75 प्रतिशत भाग आज भी देश के 6,05,224 गांवों में निवास कर रहा है । अंग्रेजी शासन काल के पूर्व गांव पूरी तरह से स्वावलम्बी थे, पर विदेशी शासनकाल के दौरान गांवों का स्वावलम्बन क्रमशः कम होता चला गया । राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात देश के नागरिकों को आर्थिक स्वतन्त्रता व सामाजिक न्याय दिलाने के लिए भारत सकार ने ग्रामीण विकास की अनेकानेक महत्वाकांक्षी योजनाओं को लागू किया, पर 42 वर्षों की विकास यात्रा पूरी करने के पश्चात् भी गांवों की अधिकांश जनसंख्या आज भी अत्यन्त ही गरीब है। ग्रामीण विकास की आवश्यकता एवं उपादेयता को दृष्टिगत रखते हुए वर्तमान में केन्द्रीय व राज्य सरकारों ने अपने बजट का लगभग 50 प्रतिशत भाग ग्रामीण विकास कार्यक्रमों पर व्यय करने के लक्ष्य को स्वीकार किया है ।

ग्रामीण विकास कार्यक्रम का अभिप्राय ग्रामीण क्षेत्रों को आर्थिक दृष्टि से सबल व सुदृढ़ बनाते हुए ग्रामीण अंचल में जीवनयापन कर रहे अत्यन्त ही गरीब व निर्बल वर्ग के व्यक्तियों के जीवन स्तर में चतुर्दिक व गुणात्मक सुधार लाना है । इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु देश में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, जवाहर रोजगार योजना, ग्रामीण पेयजल आपूर्ति, ग्रामीण निर्बल आवास, ग्रामीण विद्युतीकरण, ग्रामीण स्वच्छता, ग्रामीण महिला एवं बाल विकास, ग्रामीण यातायात व संचार विकास, ग्रामीण स्वास्थ्य व परिवार कल्याण कार्यक्रम व पर्यावरण विकास एवं संरक्षण सम्बन्धी कार्यक्रमों को उच्च प्राथमिकता के आधार पर संचालित किया जा रहा है । पर देश में साक्षरता का स्तर न्यून होने के कारण आज भी भारतीय ग्रामीण परिवेश परम्परागत रुढ़ियों व रीतियों के ताने बाने में पूरी तरह से जकड़ा हुआ है जिससे न तो विकास कार्यक्रमों का प्रभावी क्रियान्वयन ही सम्भव हो पा रहा है और न ही विकसित नवीन तकनीक का अपेक्षित लाभ ही जनजीवन को उपलब्ध कराया जाना सम्भव हो पा रहा है ।

साक्षरता एवं विकास

शिक्षा अथवा साक्षरता स्तर किसी भी देश या अर्थव्यवस्था के विकास में बड़ी ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है । देश का अपेक्षित गति से विकास तभी संभव हो पाता है जब देश के अधिकाधिक नागरिक सच्चरित्र, कर्त्तव्यनिष्ठ व राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत हों, मानव में इन सभी सद्गुणों का समागम तभी संभव है, जब वे शिक्षित व सुसंस्कृत होंगे । चेस्टर बोल्स के अनुसार "प्राकृतिक शक्तियों के नियंत्रण और संरूपण एक व्यवस्थित, प्रवेगिक व न्याय पर आधारित समाज के निर्माण में जो विभिन्न उपकरण सहायक सिद्ध होते हैं उनमें शिक्षा सबसे अधिक शक्तिशाली उपकरण है ।" साक्षरता की दृष्टि से आज तक के सरकारी, गैर सरकारी व स्वयंसेवी संस्थाओं के सभी प्रयासों के पश्चात् हमारे देश का साक्षरता प्रतिशत जो 1950-51 में 16.7 था वह 1991 तक बढ़कर मात्र 52.11 प्रतिशत ही हो पाया है जो अपर्याप्त है ।

देश में राष्ट्रीय स्तर पर साक्षरता का प्रतिशत कम होने के साथ ही साथ, स्त्रियों की साक्षरता दर पुरुषों की तुलना में बहुत ही कम है । संयुक्त राष्ट्र संघ के कृषि एवं खाद्य संगठन के अनुसार विश्व में सम्पूर्ण कृषि क्षेत्र में जितना कार्य सम्पन्न किया जाता है, साथ ही औद्योगिक क्षेत्रों में भी महिला श्रमिकों की सहभागिता को भुलाया नहीं जा सकता । अतः विकास की गति में अपेक्षित वृद्धि लाने के लिए यह परमावश्यक है कि साक्षरता कार्यक्रमों का तीव्र गति से विकास करने के साथ ही साथ महिला साक्षरता कार्यक्रम को उच्च प्राथमिकता के आधार पर संचालित किया जाय ।

वर्तमान समय में देश में साक्षरता का प्रतिशत 52.11 है, जो 1971 व 1981 की तुलना में कुछ उत्साहवर्द्धक है, पर विभिन्न राज्यों व केन्द्रशासित क्षेत्रों की साक्षरता अनुपात में बहुत बड़ा अन्तर है ।

केरल, मिजोरम, लक्षद्वीप, चंडीगढ़, गोआ व दिल्ली जैसे राज्य व क्षेत्र हैं जहाँ साक्षरता दर अधिक होने के साथ ही साथ पुरुष व महिला साक्षरता में अन्तर कम है, वहीं दूसरी तरफ आन्ध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, अरुणाचल प्रदेश,

राजस्थान व बिहार जिसमें देश की कुल जनसंख्या का लगभग दो तिहाई जनसंख्या निवास करती है वहां पर साक्षरता का प्रतिशत अत्यन्त ही न्यून होने के साथ ही व पुरुष व महिला साक्षरता दर में भारी अन्तर है । अतः ऐसी परिस्थिति में साक्षरता, विशेष रूप से महिला साक्षरता की दिशा में अधिक सचेष्ट होने की आवश्यकता है ।

भारतीय ग्रामीण परिवेश वर्तमान में अनेकानेक समस्याओं से आक्रान्त है जिसकी जड़ अशिक्षा व अज्ञानता है । ज्ञान के प्रकाश के अभाव में विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों व योजनाओं से जनमानस परिचित नहीं हो पा रहा है, साथ ही अशिक्षित बहुसंख्यक समाज प्राचीन रुढ़ियों व रीतियों से आबद्ध होने के कारण ही आधुनिकतम तकनीक व पूर्ण विकसित समाज के उच्च आदर्शों पर आधारित आधुनिक संस्कारों को स्वीकार करने को तैयार नहीं है जिससे सरकार के विकास सम्बन्धी कार्यक्रम असफल सिद्ध हो रहे हैं ।

शिक्षा विकास का अभिप्राय है । इस सत्य को स्वीकार करते हुए देश में समय-समय पर प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम संचालित किए गए । इस दिशा में महात्मा गांधी के जन्म-दिन 2 अक्तूबर 1978 को तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री मोरारजी देसाई ने प्रभावी कदम उठाया । निरक्षरता उन्मूलन के इस जन आन्दोलन को राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम के नाम से सम्बोधित किया गया । यह कार्यक्रम मात्र साक्षरता तक सीमित नहीं है पर प्रौढ़ प्रतिभागियों में राष्ट्रीयता की भावनाओं के विकास के साथ ही साथ व्यवसायिक कौशल का भी समावेश कराता है । प्रौढ़ प्रतिभागियों को अपने खाली समय का उचित उपयोग व जीवन स्तर में सुधार लाने के लिए कृषि की आधुनिकतम तकनीकों उन्नतिशील बीज, यन्त्रों व कीटनाशक दवाइयों का प्रयोग, मुर्गीपालन, मधुमक्खी पालन, पशुपालन, तथा लघु एवं कुटीर उद्योगों के सफल सम्पादन के लिए प्रेरित किया जाता है। राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम देश के विकास का अत्यन्त ही महत्वपूर्ण कार्यक्रम है । अतः इस कार्यक्रम का सफल संचालन भारत सरकार या कुछ स्वयंसेवी संस्थाओं की ही जिम्मेदारी नहीं है पर प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति की यह जिम्मेदारी है कि निरक्षरता उन्मूलन में अपनी सहभागिता सुनिश्चित करें । जिस दिन पवित्र मन से देश का प्रत्येक साक्षर व्यक्ति एक निरक्षर को साक्षर बनाने के लक्ष्य को स्वीकार कर ले उसके ठीक तीसरे महीने भारत में शत-प्रतिशत साक्षरता हो जायेगी जिससे भारतीय अर्थव्यवस्था निकट भविष्य में विकास की सीढ़ियों पर चढ़ते हुए पूर्ण विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में आने में समर्थ हो जायेगी ।

अध्यक्ष अर्थशास्त्र विभाग
कुंवर सिंह महाविद्यालय,
बलिया (उ.प्र.)

ग्रामीण शिक्षा देश के विकास की प्रमुख शर्त

□ केसर सिंह □

भारत छः लाख गांवों का देश है जहाँ लगभग 75 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। इसलिए भारत का सर्वांगीण विकास तब तक सम्भव नहीं है, जब तक कि भारतीय गांवों का विकास न हो। यूनेस्को के एक सर्वेक्षण के अनुसार 15 वर्ष से भारत का एक तिहाई वर्ग आज भी रोजी रोटी हेतु जूझ रहा है। गरीबी से जूझता वर्ग शिक्षा के लिए कैसे समय अथवा पैसा खर्च कर सकता है ? प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि 40.4 प्रतिशत गरीबों को शिक्षा उपलब्ध कराई जाए अथवा गरीबी रेखा से ऊपर उठाते हुए दो जून की रोटी मुहैया कराई जाए। निरक्षता एवं गरीबी में गहरा सम्बन्ध है जो निरक्षर हैं वे गरीब हैं और जो गरीब हैं वे निरक्षर हैं। निरक्षरता रुपी सुरसा के रहते हुए ही सरकार द्वारा चलाई जा रही विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं का लाभ वास्तविक गरीब जनता को प्राप्त नहीं हो रहा है, इसी सन्दर्भ में प्रो० गुन्नार मिर्डल ने लिखा है "बहुत बड़ी जनसंख्या को निरक्षर छोड़कर राष्ट्रीय विकास कार्यक्रम शुरू करने की बात मुझे निरर्थक मालूम होती है।"

महत्व

शिक्षा विकास का अपरिहार्य अंग है, यह विकास के लिए नींव का पत्थर है, शिक्षा को विकास से उसी प्रकार पृथक नहीं किया जा सकता जिस प्रकार मछली को पानी से, यदि शिक्षा को विकास से पृथक करके देखा जाए तो विकास योजनाओं की गति मंथर ही नहीं पड़ जाएगी वरन् दम तोड़ देगी। शिक्षा रूपी अस्त्र के माध्यम से ही किसी भी संदेश को जन सामान्य तक पहुंचाया जा सकता है चाहे वे आधुनिकीकरण के परिवर्तन हो अथवा धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक या आर्थिक परिवर्तनों की बात। अतः शिक्षा मनुष्य के उक्त समस्त पहलुओं को जिनकी व्यावहारिकता जीवन के सफल विकास हेतु अपेक्षित है, सामान्य रूप से प्रभावित करके उसमें नित्यप्रति न्यूनता, सजीवता, पुनर्निर्माण तथा यथोचित विकास का सृजन करती है।

शिक्षा का स्तर

यह विडम्बना ही है कि जगद्गुरू होने का दावा करने वाले देश में आज शिक्षा सर्वाधिक उपेक्षित है। भारत की वृहद् शिक्षा प्रणाली का विश्व की प्रमुख शिक्षा प्रणालियों में तृतीय स्थान है जबकि निरक्षरता में प्रथम स्थान है। यह सुन कर दुःख होता है कि अनुमानतः आधे से अधिक निरक्षर भारत में ही हैं या यह कहना अधिक सत्य होगा कि भारत के गांवों में ही हैं। आज हमारे गांवों में जो समस्याएं विद्यमान हैं उनकी जड़ है अशिक्षा। इसके चलते ही कृषि के नए-नए तरीके, कीटनाशक दवाएं, खाद, आधुनिक कृषि उपकरण एवं फसलों के सम्बन्ध में उपयोगी जानकारी ग्रामीण नहीं जान पाते। कृषि सम्बन्धित जो साहित्य प्रकाशित होते हैं निरक्षरता के कारण ही हमारे किसान उनसे लाभान्वित नहीं हो पाते। निःसन्देह स्वतंत्रता प्राप्ति के 44 वर्षों के दौरान भारत ने अनेक क्षेत्रों में प्रगति एवं विकास के नये आयाम स्थापित किए हैं तथा आत्मनिर्भरता की ओर कदम बढ़ाए हैं लेकिन निरक्षरता उन्मूलन की शिक्षा में बनिस्पत कम सफलता हासिल की है।

अन्य देशों से तुलनात्मक अध्ययन

भारत में विश्व के विकसित एवं विकासशील देशों की तुलना में बजट का बहुत कम हिस्सा व्यय किया जाता है। अमेरिका में शिक्षा पर बजट का 19.9 प्रतिशत व्यय किया जाता है जबकि जापान में 10.6 प्रतिशत, इंग्लैंड में 13.9 प्रतिशत, बर्मा में 11.2 प्रतिशत श्रीलंका में 7.4 प्रतिशत और भारत में शिक्षा पर नाममात्र व्यय किया जाता है। इन देशों में साक्षरता दर 99.5 प्रतिशत, 99 प्रतिशत, 65.9 प्रतिशत, 86.5 प्रतिशत 36.2 प्रतिशत है। यह कितनी हास्यास्पद बात है कि हमारे देश में साक्षरता दर अन्य देशों के तुलना में बहुत कम है।

महंगी शिक्षा पद्धति

हमारे देश की खर्चीली शिक्षा प्रणाली के कारण गरीब ग्रामीण अपने बच्चों को येन-केन-प्रकारेण हाईस्कूल या इंटर तक तो पढ़ाते हैं किन्तु आगे पढ़ाने में असमर्थ रहते हैं। कारण स्पष्ट है ऊँचे शिक्षण शुल्क, महंगी पाठ्य पुस्तकें एवं अभ्यास पुस्तिकाएं तथा अन्य खर्चे, विज्ञान और प्रौद्योगिकी की शिक्षा पाना तो ग्रामीण बच्चों के लिए दिवास्वप्न है। इन सबसे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि जैसे तैसे ग्रामीण बच्चे पढ़ भी जाते

हैं तो रोजगार सहज सुलभ नहीं मिल पाता है।जिस शिक्षा को मानसिकता तथा वैचारिक बंधनों से मुक्त कराने तथा आर्थिक दृढ़ता प्रदान करने का शक्ति माना गया था आज वह ग्रामीण निर्धन तथा दलित वर्ग के शोषण का नवीन अस्त्र बन गई है ।

प्रौढ़ शिक्षा की आवश्यकता

वर्तमान समय की मांग है । प्रौढ़ शिक्षा एवं साक्षरता में अंतर है । आजकल साक्षरता को ही अतिरंजित करके प्रौढ़ शिक्षा का नाम दिया जाता है । प्रौढ़ शिक्षा की विषय वस्तु एवं प्रक्रिया जीवन की सच्चाइयों एवं अनुभवों से जुड़ी हैं । देश के उपयोगी मानव संसाधनों का विकास करने हेतु एक केन्द्रीय समन्वित विकास कार्यक्रम की आवश्यकता है । देश की निरक्षर ग्रामीण जनता को राष्ट्रीय विकास की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से सहयोग देने योग्य बनाने के साथ ही उनकी कार्यात्मक कुशलता भी बढ़ानी चाहिए । आवश्यकता इस बात की है कि ग्रामीण जनता अपने पिछड़ेपन के कारणों को जाने तथा संगठित होकर विकास कार्यों में भाग ले ।

तीव्रता हेतु उपाय

(क) शिक्षा को मौलिक अधिकार बनाया जाये ।

(ख) स्कूलों को स्वायत्तता व प्रधानाध्यापकों को व्यापक अधिकार दिये जायें ।

(ग) शिक्षा पर राष्ट्रीय आय का कम से कम 6% खर्च अवश्य किया जाये ।

(घ) प्राथमिक शिक्षण पर खर्च का स्तर निरन्तर घट रहा है जो कि वास्तव में बढ़ना चाहिए ।

(ङ) शिक्षा की योजना सिर्फ कुछ प्रतिशत लोगों को ध्यान में रखते हुए ही बनाई जाती है जबकि उसमें खेत में कार्यरत कृषक के बच्चे या किसी लघु कारखाने में मशीनी श्रम करते हुए बच्चे को भी ध्यान में रखना चाहिए ।

(च) हमारे योजनाकारों ने उच्च तकनीकी ढांचा बनाने पर अधिक ध्यान दिया सबको शिक्षित करने के बुनियादी प्रश्न पर कम ध्यान दिया जो तर्कसंगत नहीं है ।

गांवों की निरक्षरता को दूर करने के लिए उक्त बिन्दुओं का ध्यान रखने के साथ ही हमें यह भी ध्यान रखना है कि शिक्षा के साथ ग्रामीण युवकों को व्यावहारिक रूप में तकनीकी शिक्षा प्रदान की जाए, भारत कृषि व्यवसाय प्रधान देश है अतः शिक्षा ऐसी हो जो कृषि की प्रतिष्ठा में वृद्धि करे उच्च शिक्षा व रोजगार विमुख शिक्षा पर अंकुश लगाया जाये, बालिकाओं की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाये, गांवों में जो भी कार्यक्रम चलाए जायें, भ्रष्टाचार पर नियन्त्रण रखा जाये, यही नहीं इसके अन्तर्गत उन्हें राष्ट्रीय एकता, अखण्डता, छोटा परिवार तथा पर्यावरण जैसे विषयों का महत्व भी समझाया जाये, ताकि वे इन विषयों पर सोचें तथा उन्हें अपनी रोजमर्रा की जिन्दगी का अंग बनाने का प्रयत्न करें ।

समीक्षात्मक रूप में हम कह सकते हैं कि यदि हमें गांवों का कायाकल्प करना है, हरित क्रान्ति श्वेत क्रान्ति व नीली क्रान्ति लानी है, देश को सम्पन्न व आत्मनिर्भर बनाना है, आयात कम तथा निर्यात बढ़ाना है, तो सर्वप्रथम ग्रामीणों को शिक्षित एवं जागरूक बनाना होगा और यह संभव है जब उपर्युक्त सुझावों के अमल में लाया जाये अन्यथा ग्रामीण विकास हेतु कोई भी कदम बालू पर दीवार उठाना होगा ।

टी-33, टीचर्स होस्टल
राजस्थान विश्वविद्यालय
जयपुर (राज.)-302 004

महिला-बाल विकास में संचार-माध्यमों की भूमिका

□ आशारानी वोरा □

"यह हवाई जहाज मैंने बनाया है, इसे मैं उड़ाऊंगी।" भाई द्वारा झपट कर कागज का हवाई जहाज छीनने पर बहन का विरोध।

"लड़कियां भी कहीं हवाई जहाज उड़ाती हैं ? इसे मैं उड़ाउंगा।" भाई का अधिकार जताता उत्तर।

"पहले मैं चलाउंगी।" विरोध की दृढ़ता।

"नहीं, पहले मैं चलाऊंगा।" गर्वीला स्वर।

"क्यों ? मैंने बनाया है इसे। मैं क्यों नहीं चलाऊंगी इसे ?" एक वाजिब प्रश्न।

"मुझे दे दो" – भाई ने कहा...।

भाई की छीनाझपटी, फिर भाग कर मां से शिकायत––

"मां...ओ मां...। देखो मुझे, खेलने के लिए हवाई जहाज नहीं देती।"

हाथ का काम छोड़कर मां का बाहर आना, बिना जाने-समझे सीधे बेटे का पक्ष लेना, बेटी को डांट-डपट कर, "क्यों री, भाई को क्यों तंग करती है ? दे उसे।" उसके हाथ से कागज का हवाई जहाज छीन, बेटे को पकड़ा देना। बेटी का सिर थाम कर बैठ जाना, बिसूरना और भाई का गर्व से सिर ऊंचा किये, बहन को चिढ़ाते हुए, बाहर भाग जाना।

—यह है, हमारे आम घरों में, आम माताओं द्वारा जन्म से लेकर किशोरावस्था तक बेटे-बेटी के पालनपोषण में भेदभाव की एक आम तस्वीर, जो दूरदर्शन पर अक्सर दिखाई जाती है।

विषय बेटी-बेटे में भेदभाव का हो या दहेज जैसी बुराइयों का; स्वास्थ्य-रक्षा का हो, पोषण का हो अथवा बीमारियों की रोकथाम का; गर्भवती मां और गर्भस्थ शिशु की देखभाल का हो या बच्चों की सुरक्षा के लिए टीकाकरण का; परिवार-नियोजन संबंधी जानकारियों का हो या परिवार-कल्याण के लिए सही सलाह प्राप्त करने का, संचार माध्यमों (आकाशवाणी, दूरदर्शन, पत्र-पत्रिकाएं, प्रचार विज्ञापन आदि) की भूमिका आज विकास के लिए असंदिग्ध है। यह भूमिका इसलिए महत्वपूर्ण है कि हमारी विकास-योजनाओं की सफलता बहुत कुछ इन माध्यमों के सही उपयोग पर ही निर्भर करती है।

महिला और बाल-विकास हमारी सामाजिक विकास-योजनाओं का महत्वपूर्ण अंग है। इसलिए कि विकास जड़ों से ही शुरू होता है– भूमि, खाद, बीज के बाद भलीभांति सिंचाई, खरपतवार की काट-छांट और पौधों की देखभाल। पेड़, फल, फूल, हरियाली और इस सबसे प्राप्त समाज-जीवन को सींचने, हरा-भरा रखने वाली मानव-पौध के विकास पर ही तो विकास का सारा ढांचा खड़ा होता है। इसलिए हमारी सारी पंचवर्षीय योजनाओं, ग्रामीण विकास-योजनाओं और सामुदायिक कल्याण योजनाओं में बुनियादी जरूरत के रूप में मां-बच्चे के विकास को प्राथमिक स्तर पर रखा गया है।

सूचनाओं और ज्ञान के विस्फोट के इस युग में संचार-माध्यमों की अहम् भूमिका को आज सारे विश्व में स्वीकारा गया है कि इसके दूरगामी प्रभाव होते हैं। भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले देश में, जहां अभी भी अस्सी प्रतिशत ग्रामीण जनता निरक्षर है, पत्र-पत्रिकाएं व्यापक स्तर पर जन-चेतना जगाने का कार्य नहीं कर सकतीं; बल्कि पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से जनसंख्या-नियंत्रण जैसे संदेश एक ओर पूर्व जागृत-चेतना को अतिरिक्त सजगता में बदल कर जनसंख्या में गुणात्मक ह्रास को प्रोत्साहित कर रहे हैं, दूसरी ओर आम अशिक्षित जन तक उनकी पहुंच न होने से जिन गरीब और निम्न वर्गों तक यह संदेश अवश्य पहुंचना चाहिए, वे ही इससे वंचित रह जाते हैं। सजगता के अभाव में निचले स्तरों पर जनसंख्या बेतहाशा बढ़ती रहती है और धन, सामर्थ्य से युक्त प्रतिभावान अल्प वर्ग कम संतान देकर मानव-संसाधन में ह्रास की स्थिति ला देते हैं। अतः प्रेस-माध्यम के बाद, आकाशवाणी की भूमिका अहम् मानी गई और गांव-गांव तक ये संदेश पहुंचाने का प्रयत्न किया गया। इसके वांछित परिणाम भी देखने में आए। किन्तु दूरदर्शन दृश्य माध्यम होने से सर्वाधिक प्रभावी सिद्ध हुआ। इसलिए 1981 के बाद दूरदर्शन का राष्ट्रव्यापी जाल फैला कर 13 करोड़ के लगभग जनता को इस माध्यम से जोड़ दिया गया।

कहने की जरूरत नहीं कि 'कृषि दर्शन' जैसे कार्यक्रम ने भारतीय कृषक समाज को नई तकनीकों, विधियों और शासन-

प्रशासन से प्राप्त सुविधाओं की जानकारियां देकर प्रशिक्षित किया और इससे अधिक उत्पादन व किस्म-सुधार के वांछित परिणाम सामने आए। इसी तरह, परिवार-नियोजन के क्षेत्र में जो कार्य गांव-गांव में भेजे गए प्रशिक्षित कार्यकर्ता नहीं कर पाए, वह दूरदर्शन ने कर दिखाया कि घर बैठे मनोरंजन-माध्यम से ग्रामीण.जन खुद-ब-खुद प्रशिक्षित होने लगे। अब यह अलग बहस का विषय हो सकता है कि जन-शिक्षण के लिए लाए गए 'निरोध' जैसे विज्ञापन समाज में अबोध बच्चों या किशोर वर्ग पर क्या प्रभाव छोड़ रहे हैं। इस नाजुक विषय पर स्वास्थ्य-अधिकारियों, समाजशास्त्रियों और मीडिया-विशेषज्ञों को परस्पर मिल बैठकर ऐसी नीतियां अपनानी चाहिए कि संदेश तो संप्रेषित हों, किन्तु नासमझ उम्र के बच्चों-किशोरों को उनके दुष्परिणामों से बचाया जा सके।

जहाँ तक मां-शिशु की सुरक्षा का प्रश्न है, इसमें दो राय नहीं कि देश की सारी स्वास्थ्य सुधार योजनाएं इस बुनियादी सुधार पर निर्भर हैं और जन-शिक्षण के सभी माध्यम इस दिशा में विकास के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं; सर्वाधिक प्रभावी माध्यम दूरदर्शन कुछ अधिक ही। उदाहरण के लिए ग्रामीण मातृ-शिशु केन्द्रों, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों, आंगनबाड़ियों आदि से संबंधित जानकारियां, मां-शिशु की स्वास्थ्य-रक्षा, पोषण, बीमारियों से बचाव, कौन से टीके कब और क्यों लगवाए जाने चाहिए ? जानलेवा शिशु-रोगों की रोकथाम-जैसे अतिसार में तुरंत बचाव के लिए क्या करें ? निर्जलीकरण न हो, इसके लिए घर में नमक-चीनी का सस्ता घोल कैसे बनाएं ? किस रोग में क्या घरेलू चिकित्सा दें ? क्या बचावी उपाय करें ? क्या खुराक दें ? रोग की किस स्थिति में डॉक्टर को अवश्य दिखाएं ? आदि जन-शिक्षण का यह काम आज दूरदर्शन के माध्यम से बड़े पैमाने पर हो रहा है। अब अधिकांश अनपढ़ माएं भी इन मोटी जानकारियों में प्रशिक्षित हो रही हैं, क्योंकि दूरदर्शन उनकी रुचि, उनके मनोरंजन के साथ जुड़कर अप्रत्यक्ष प्रभाव से अपनी परिवर्तनकारी भूमिका बखूबी निभा रहा है।

इसी तरह सामाजिक कुरीतियों के निवारण में भी संचार-माध्यमों की; विशेष रूप से दूरदर्शन की भूमिका अपनी खासी अहमियत रखती है। जैसे : लिंग-निर्धारण संबंधी नई तकनीक का दुरुपयोग कर के बेटी का जन्म रोकना। बेटे-बेटी के पालन पोषण में आज भी परिवारों का वही रुढ़िवादी दृष्टिकोण, जो बेटियों के सहज विकास में बाधक है। कामकाजी महिलाओं पर घर-बाहर के दोहरे कार्यभार की समस्या और घर के काम में पति का हाथ न बंटाना। दहेज-समस्या, शोषण-अत्याचार से मुक्ति के लिए कानूनी अधिकारों की अनभिज्ञता आदि। इसमें संदेह नहीं कि दूरदर्शन की विकास-केंद्रित झलकियां और विभिन्न कार्यक्रम-परियोजनाएं अपने ढंग से कुरीति-निवारण और सामाजिक जागरुकता के काम में निरंतर संलग्न हैं। उनके अनेक वांछित परिणाम भी देखने में आ रहे हैं।

किंतु इस तथ्य से आंख नहीं मूंदी जा सकती कि सुरक्षा की दृष्टि से भी दिखाए जाने वाले अपराध, हिंसा, यौन-हिंसा या बलात्कार, 'दहेज-दाह' जैसे दृश्य अपराधी मनोवृत्ति के व्यक्तियों और येन-केन-प्रकारेण 'शार्ट कट' से रातोंरात धनवान होने के ख्वाब देखने वाले लालची व स्वार्थी किस्म के लोगों को सुझावात्मक प्रेरणा देकर इस ओर अधिक प्रवृत्त भी कर रहे हैं। तो देखना होगा कि विकास-केन्द्रित हमारे ये कार्यक्रम बहुत सोच-समझ कर, इस ढंग से प्रदर्शित किये जाएं कि सामाजिक-जागरूकता के नाम पर केवल 'अधिकार-चेतना' ही न उभर पाए, अधिकार और कर्त्तव्य में संतुलन भी स्थापित करे। भ्रष्टाचार, बलात्कार, गुंडागर्दी, नशाखोरी, आदि के दृश्य केवल अंत में ही सकारात्मक परिणाम—यानि 'अंत भला, सो भला' ही न दिखा कर, इन अवांछित प्रवृत्तियों के प्रेरणात्मक उभार को रोकने में भी सक्षम हों। तभी हम विकास की अपनी परिकल्पनाओं को सार्थक कर पाएंगे। जैसे छुरेबाजी और खून-खराबा आदि दिखाकर, गुंडई के प्रदर्शन द्वारा भले तबकों (जिनकी संख्या आज भी बहुमत में है) में दहशत का संचार करना और बाहुबल को नैतिक शक्ति के ऊपर भारी दिखाना ? सास को मिट्टी का तेल और माचिस लिए दिखा कर बहुसंख्यक भली सासों को अपमानित करना और विवाहयोग्य युवतियों के मन में ससुराल का हौवा बैठाकर उन्हें पूर्वाग्रहयुक्त बनाना, जिससे परस्पर निभाव की कम होती प्रवृत्ति और क्षीण हो जाए। बदलाव के नाम पर बेटी-बेटे के मूल प्राकृतिक अंतर और उनकी परस्परपूरक सामाजिक भूमिका को अनदेखा कर परस्पर सहयोग की भावना विकसित करने के बजाय, लड़के-लड़की, स्त्री-पुरुष, अभिभावक-संतान के बीच टकराव की स्थितियों को न्यौता देना, आदि। अतः संचार-माध्यमों की महत्वपूर्ण विकास-भूमिका के साथ उभरे इन अवांछित परिणामों पर भी नजर रखनी होगी। किशोर पीढ़ी के लिए आज यौन-शिक्षा की जरूरत भी जोर-शोर से महसूस की जा रही है, तो ऐसे नाजुक विषयों को शिक्षण-प्रशिक्षण के लिए प्रदर्शित करते समय हमें और भी अधिक सावधान होना पड़ेगा कि क्या

दिखाएं, क्या नहीं, से भी अधिक महत्वपूर्ण प्रश्न है कि किस ढंग से दिखाएं ?

इन सबसे अलग हमें यह भी देखना होगा कि विकासमूलक कार्यक्रम कहीं उपभोक्तामूलक तो नहीं हो रहे । विकास तो हो, लेकिन विकास की दिशा क्या हो ? मनोरंजन स्वयं संस्कृति का एक पक्ष है, किन्तु संस्कृति केवल नाच-गाना ही नहीं है । संस्कृति तो भारत के जनमानस में इतने गहरे तक रची-बसी है कि उसे पश्चिम प्रभावित मीडिया चाहकर भी अलग नहीं कर सकता । संचार-माध्यम तो समूह संस्कृति के प्रवक्ता हैं । समूह-संस्कृति के उन्नयन के नाम पर संस्कृति विहीनता अथवा अपसंस्कृति का समर्थन किसी भी हालत में नहीं किया जा सकता । खेद है कि 1988 की 'देवधर समिति' और 1991 की 'एम. दामोदरन समिति' ने भारतीय दूरदर्शन के लिए क्रमशः अमेरिकी और ब्रिटिश माडल ही अपनाने का सुझाव दिया और कार्यक्रमों को भारतीय सांस्कृतिक आधार प्रदान करने के लिए ठोस, सकारात्मक व सार्थक सुझाव कम सामने आये । इसका दुष्परिणाम हमारे सामने हैं। गरीब आम भारतीय जन 'नागरिक' के बजाय 'उपभोक्ता' बन रहा है, किन्तु अपने परिवेशगत स्वभाव और जेब की तंगी के कारण तनाव, विघटन और सांस्कृतिक क्षय की ओर अग्रसर है ।

देश के बहुसंख्य बच्चों को परिवार के बजट के भीतर पोषक खुराक और शुद्ध पेयजल उपलब्ध कराना हमारी प्राथमिकता होनी चाहिए, न कि 'मैगी', 'अंकल चिप्स' जैसे महंगे 'फास्ट फूड' ? बच्चे जब दूरदर्शन पर ये विज्ञापन देख कर घर-घर में इन खाद्य पदार्थों और अन्य उपभोक्ता सामग्रियों की मांग करते हैं तो आम अभिभावकों; विशेष रूप से बहुसंख्य माताओं पर क्या बीतती है ? इसका अध्ययन सर्वेक्षण हमारी आंखें खोलने के लिए पर्याप्त होगा । किशोर पीढ़ी और बेरोजगार युवा पीढ़ी पर पड़ने वाले इस उपभोक्ता संस्कृति के दुष्प्रभाव को भी अगर समय रहते नहीं पढ़ा-समझा गया तो आगे स्थितियां विस्फोटक हो सकती हैं ।

विकासमूलक कार्यक्रमों को जनसंचार-माध्यमों द्वारा बहुसंख्यक समाज के साथ जोड़ा जाना चाहिए, अन्यथा इसी तरह अमीर-गरीब की खाई बढ़ती रहेगी और भ्रष्टाचार रोकने के हमारे सभी सामाजिक व विधायी उपाय असफल होते रहेंगे । विशेष रूप से प्रचार-माध्यम बहुसंख्यक वर्गों की ओर उन्मुख नहीं होंगे तो न हमारी बेतहाशा बढ़ती आबादी का समाधान सरलता से हो पाएगा, न उपभोक्ता संस्कृति से उत्पन्न विकृतियों से ही निजात पाई जा सकेगी ।

भारतीयता सर्वप्रथम आत्मीय सामूहिकता में निहित है और सभी चिंतनशील लोग महसूस कर रहे हैं कि दूरदर्शन कार्यक्रम हमारी सामाजिकता में ही बाधक सिद्ध हो रहे हैं । विशेष रूप से नगरों-महानगरों की व्यस्तता-अतिव्यस्तता, भाग-दौड़ और तीव्र गतिमय जीवन में लोग यों भी संबंधों से कटकर अकेले पड़ गये हैं । समयाभाव और अकेलेपन में दूरदर्शन ही मात्र साथी सिद्ध हो रहा है । किन्तु व्यस्त, कामकाजी, जहां इस माध्यम की शरण में राहत अनुभव करते हैं, वहां बच्चे और किशोर किताबों से, खेल से, दोस्तों से, परिवार से कट कर दूरदर्शन-कार्यक्रमों और फिल्मों की चकाचौंध व भूलभुलयों में गुम हो रहे हैं । माता-पिता परेशान हैं कि बच्चे पढ़ाई, खेल से हटकर टी०वी० के सामने बैठे रहना चाहते हैं, किन्तु बच्चों को समय न दे पाने की उनकी अपनी मजबूरी आड़े आती है । अध्यापक परेशान हैं कि बच्चे 'होमवर्क' पूरा करके नहीं लाते और कक्षा में हर बच्चे पर अलग से ध्यान देना संभव न होने से वे पढ़ाई में पिछड़ने लगते हैं । शिक्षक, अभिभावक, दोनों की संयुक्त चिंता है कि परिवार के बजट को आघात पहुंचा कर भी बच्चों को ट्यूशन का मोहताज बनाया जा रहा है और उनकी मौलिक प्रतिभा का सहज विकास अवरुद्ध हो रहा है ।

किन्तु यहां हम यह भूल जाते हैं कि इन दोनों पक्षों से अलग एक तीसरा पक्ष बच्चे का अपना भी है । अविकसित मन-मस्तिष्क पर एक ओर स्कूल के भारी बस्ते का बोझ है; प्रतियोगिता के इस युग में अतिरिक्त पढ़ाई तथा ट्यूशन का बोझ है, दूसरी ओर विकासशील उम्र की बढ़ी-चढ़ी जिज्ञासा में मनोरंजन-साधनों का आकर्षण है, जो मनोरंजन के साथ ज्ञान के विस्फोट के साधन भी हैं । यह उत्तेजक-उत्प्रेरक प्रभाव उनसे उनकी सामर्थ्य-सीमा से अधिक की अपेक्षा करता है । परिणाम होता है, छोटी उम्र से ही बच्चों का तनावों से घिर जाना, उनकी अपेक्षाओं, और उपलब्धियों या प्राप्त सुविधाओं के आंतरिक द्वंद्वों के दबाव में उनका दिशाहीन भटकाव की ओर उन्मुख होना तथा फलस्वरूप अनेक मामलों में उनका मानसिक विकृतियों और व्याधियों का शिकार हो जाना । तो फिर वही प्रश्न उठता है कि बाल-विकास को मनोरंजन के माध्यम से जोड़ने का ढंग क्या हो ? विकास की दिशा क्या हो ? कि बच्चों को स्कूली पढ़ाई के अतिरिक्त सामान्य ज्ञान-विज्ञान में प्रशिक्षण भी मिले, उन्हें भरपूर मनोरंजन भी सुलभ हो और उन्हें उपभोक्ता समाज की अतिरिक्त अपेक्षाओं तथा सामाजिक

विकृतियों के दुष्प्रभाव से बचाया भी जा सके ?

ज़ाहिर है, बच्चों के कार्यक्रम खूब सोच-समझ कर तैयार करने होंगे । बच्चों को फिल्मी आकर्षण से बचाकर इस ओर उन्मुख भी करना होगा कि वे उनके लिए निर्मित बाल कार्यक्रम जरूर देखें । इसके लिए एक ओर बाल-कार्यक्रम आकर्षक हों, बाल-जिज्ञासा, बाल-कल्याण, बाल-रुचि का विकास करने वाले हों, दूसरी ओर कथित 'बड़ों के लिए' प्रदर्शित कार्यक्रम भी केवल 'बड़ों' के लिए ही न हों । और जो न हों, उनका समय बच्चों का समय न हो । मनोरंजन-माध्यमों की विकास-दिशा निर्धारित करने के लिए सावधानियां बरतनी ही चाहिए, फिर कार्यक्रमों के घंटे कम हों या ज्यादा, इससे कोई अंतर नहीं पड़ेगा ।

संचार-माध्यमों को महिला और बाल-विकास की ओर उन्मुख करने के लिए यह भी जरूरी है कि सामान्य साहित्य, महिला रुचि के साहित्य और बाल-साहित्य की उपेक्षा न हो । सुरुचिपूर्ण, प्रेरणाप्रद बाल साहित्य प्रचुर मात्रा में उपलब्ध कराया जाये तो बच्चों को केवल रोमांचक रहस्यकथाओं, कॉमिक्स, फिल्मी गप्प-साहित्य या किस्सागोई से बचाकर, उनकी प्रतिभा को सहज विकसित होने का अवसर प्रदान किया जा सकता है । बच्चों की प्रतिभा के कल्पना के सहज विकास के लिए और बच्चों के भीतर सामाजिकता को, समूह भावना को, नागरिक जिम्मेदारी को विकसित करने के लिए बाल-संस्थाओं, बालभवनों, बाल संस्कार-केन्द्रों तथा बाल-किशोर परामर्श केन्द्रों की भूमिका भी अपनी अलग अहमियत रखती है। इसलिए इन बाल-संस्थाओं का विस्तार और उनका संचार-माध्यमों से जुड़ाव भी जरूरी है । इसी तरह महिला मंडलों, महिला संस्थाओं का भी ।

जी-300, सेक्टर-22,
नोएडा-201 301

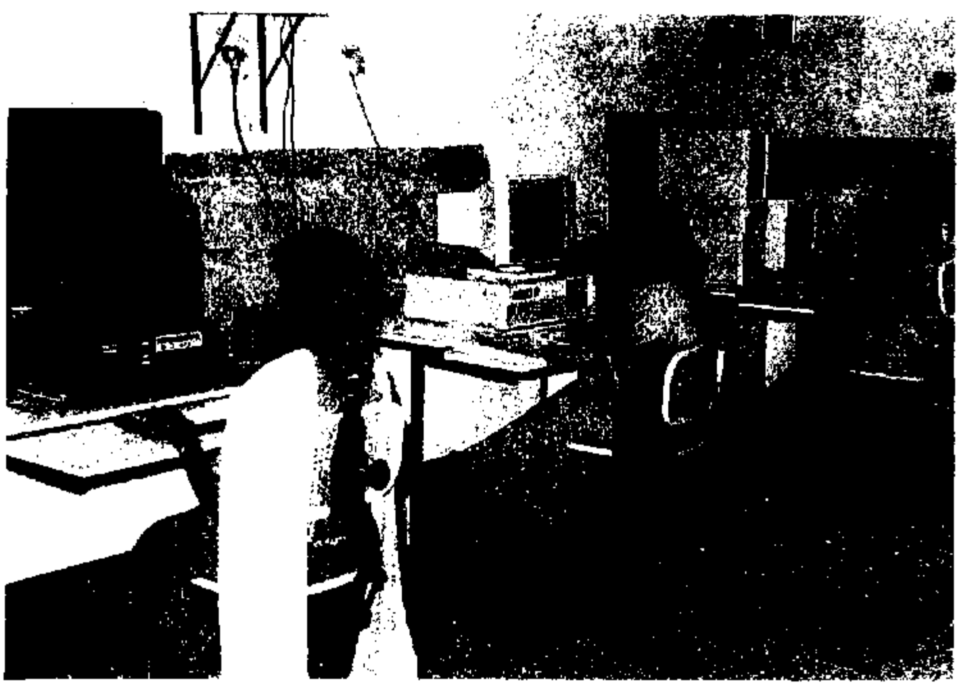

राष्ट्रीय सेवा योजना और सघन साक्षरता

□ डॉ० एल०डी० गुप्ता □

"अहं". की संकुचित सीमाओं से बाहर निकलते ही "भवान" का अंतहीन विस्तार है दूसरों के लिए कुछ कर गुजरने का इरादा लेकर निकलिये तो चारों ओर काम ही काम दिखाई देगा। जिन्दगी का इससे अच्छा मकसद कुछ हो भी नहीं सकता। राष्ट्रीय सेवा योजना युवा समुदाय को इस अच्छे मकसद से जोड़ने का एक उपक्रम है ताकि वे अपनी ऊर्जा को विध्वंस की दिशा से हटाकर रचनात्मकता की ओर जोड़े और समाज को इंसानियत की ताजगी से दमकती हुई एक नई शक्ल देने में लगा सकें ताकि युवा निरुद्देश्य भटकाव का पर्याय न रहकर एक सार्थक एवं उपयोगी जिन्दगी जी सकें।

राष्ट्रीय सेवा योजना का मूल दर्शन है– समाज सेवा के माध्यम से युवकों को शिक्षित करना। वर्तमान शिक्षा प्रणाली और जीवन की यथार्थता इन दोनों के बीच एक गहरी खाई है और राष्ट्रीय सेवा योजना इस खाई को पाटने का प्रयास है इस सफलता का अर्थ होगा देश के युवकों का व्यक्तित्व विकास, एक ऐसा व्यक्तित्व जिसकी रचना जीवन के मधुर एवं कटु अनुभवों के आधार पर हुई हो। राष्ट्रीय सेवा योजना अपनी इस मुहिम में गत 20-21 वर्ष से जुटी है। निर्माण एवं विकास, रचना व संरचना, कर्म और सार्थकता तथा नई-नई दिशाओं की तलाश के बीच इसके कदम सतत् बढ़ते गये हैं। सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन में युवा पीढ़ी की हिस्सेदारी को बढ़ाने और उसकी अर्न्तनिहित सृजनशक्ति का सदुपयोग करने की दृष्टि से चलाई जा रही राष्ट्रीय सेवा योजना का कुल मिलाकर फल यह हुआ है कि इससे जुड़ा हुआ युवा तुलनात्मक दृष्टि से सोद्देश्य कर्मपथ पर गतिशील दिखाई देता है। रा०से०यो० की बहुआयामी दिशा दृष्टि तथा आंचलिक परिस्थितियों के अनुसार कार्य को हाथ में लेने की विशिष्ट परम्परा के कारण राष्ट्रीय सेवा योजना भारत सहित मध्य प्रदेश के समस्त महाविद्यालयों तथा चुने हुए के विद्यालयों, अभियांत्रिकी, चिकित्सा, कृषि, आदि महाविद्यालयों के छात्रों में दिनोंदिन लोकप्रिय होती जा रही हैं। म०प्र० में तो यह इसी से प्रमाणित है कि प्रदेश में प्रतिवर्ष राष्ट्रीय सेवा योजना को आवंटित छात्र संख्या से ज्यादा छात्र-छात्रायें इसके कार्यक्रमों में भाग लेते रहे हैं। क्या यह प्रसन्नता एवं गर्व की बात नहीं है की 1969 में शुरू की गयी यह योजना कदाचित वर्ष 1948 में स्थापित छात्र सेना (एनसीसी) से ज्यादा लोकप्रिय हो रही है जबकि मेरे अपने अनुमान के अनुसार एनसीसी के सम्पूर्ण प्रशासकीय ढांचे एवं कायक्रमों पर होने वाला व्यय रासेयो की तुलना में ज्यादा होना चाहिये।

मध्य प्रदेश राष्ट्रीय सेवा योजना के द्वारा अनेक कार्यक्रम समय-समय पर हाथ में लिए गये हैं। विशेष शिविरों के माध्यम से पुरा सम्पदा की रक्षा तथा उनका समुचित रख-रखाव, युवा बनाम सफाई एवं गंदगी, युवा बनाम बीमारी एवं टीकाकरण के कार्यक्रम हाथ में लिए गए। वृक्षारोपण शिविरों के साथ-साथ वृक्षों एवं पर्यावरण के प्रति ग्रामवासियों में एक सोच विकसित करने के उद्देश्य से वृक्षगंगा रैलियों की शुरूआत की गयी। रोपित पौधों की सुरक्षा एवं भूमि के कटाव तथा पर्यावरण हेतु कार्य किये गये गए। नियमित गतिविधियों के अंतर्गत झुग्गी-झोपड़ी में सेवाकार्य, बुक-बैंकों की स्थापना, अल्प बचत के खाते खुलवाना, अस्पतालों में सेवा कार्य एवं रक्तदान, शासकीय सुविधाओं एवं नीतियों की जानकारी का प्रचार-प्रसार जैसे अनेक कार्य रासेयो ने अपने हाथ में लिए हैं। स्थानीय परिस्थितियों में सलाहकार समिति के परामर्श से कार्यक्रम अधिकारी अन्य कार्यों को भी ले सकता है। अपने कार्यों के माध्यम से रासेयो कर्मी अपनी जीवंतता और सजगता का परिचय समाज को देते रहे हैं। परन्तु वर्तमान में राष्ट्र के समक्ष जो अनेक समस्यायें विद्यमान हैं उनमें मेरे अपने सामान्य मत में निरक्षरता की समस्या सबसे बड़ी समस्या है। एक मोटे अनुमान के अनुसार विश्व का हर दूसरा निरक्षर भारतीय है। महिला निरक्षरों की स्थिति तो और भी दयनीय है। मैं नहीं समझता कि मात्र 4-5 वर्षों के पूर्व तक इस समस्या को कोई एक गंभीर समस्या माना गया हो, हमारी योजनाओं में इस समस्या को कोई एक गंभीर समस्या माना गया हो, हमारी योजनाओं में इस समस्या से निपटने के लिए कार्यदल बनाया गया हो, यहां तक कि देश के अधिकांश राजनीतिक दलों ने कभी इस समस्या पर शायद ही गंभीरता से विचार किया हो। आंकड़ों की दुनिया में जाने पर पता चलता है कि हमारे अपने पड़ोसी देश एवं दक्षिण पूर्व एशियाई देश यथा बर्मा (अब

म्यानमार), श्रीलंका, मलेशिया, वियतनाम, लाओस, थाईलैण्ड, कम्पूचिया, इण्डोनेशिया, सिंगापुर तथा फिलीपींस साक्षरता की दिशा में हमसे बहुत आगे बढ़ गये हैं। हमसे कई मायनों में गरीब तथा अविकसित लेटिन अमरीकी, अफ्रीकी तथा एशियाई राष्ट्रों ने मात्र दस वर्ष में जो साक्षरता की दर प्राप्त की उसे पाने में हमें 40 वर्ष लगे हैं। मेरा अपना स्पष्ट विचार है कि निरक्षरता उन्मूलन या साक्षरता के प्रचार-प्रसार कार्यक्रम को स्वाधीनता के पूर्व तथा पश्चात् केवल शासकीय कार्यक्रम या सरकारी उत्तरदायित्व ही माना गया जबकि समस्या की जटिलता, उसकी प्रकृति तथा जन सामान्य तक सीधी पहुंच बनाने के लिए यह आवश्यक था कि योजनाओं में इसे अन्य बातों के साथ न केवल सर्वोच्च प्राथमिकता दी जाती है वरन् इसे जन अभियान के रूप में चलाया जाना चाहिए।

प्रसन्नता की बात है कि नई शिक्षा नीति 1986 के साथ ही कार्यात्मक साक्षरता (फंक्शलन लिटरेसी) का दौर शुरू हुआ और इसमें जहाँ एक ओर शासकीय अमले को गतिशील बनाया गया वहीं इसमें विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों के एन०एस०एस० तथा एन०सी०सी० के छात्रों को इस राष्ट्रीय धारा के साथ जोड़ा गया। 5 मई 1988 को राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के साथ ही ऐसे संगठनों को जोड़कर इसे एक अभियान का रूप दे दिया गया है।

यूं तो मध्य प्रदेश के रासेयो के स्वयंसेवक वर्ष 1982-83 से ही प्रौढ़ शिक्षा के केन्द्रों को संचालित कर रहे थे। इसी वर्ष से प्रत्येक रासेयो इकाई के लिए यह अनिवार्य कर दिया गया था कि वह कम से कम एक प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र अवश्य चलाएगी। इस प्रक्रिया के आधार पर अकेले 1982-83 वर्ष में 161 केन्द्रों के माध्यम से रासेयो कर्मियों ने 5130 प्रौढ़ों को साक्षर बनाया। रासेयो छात्रों ने केवल निरक्षरों को साक्षर ही नहीं किया अपितु केन्द्रों के आसपास का विस्तृत सर्वेक्षण किया और आवश्यकताओं को प्राथमिकता के आधार पर चिन्हित किया। प्रौढ़ छात्रों और उनके परिवारों से व्यक्तिगत संपर्क स्थापित किया तथा केन्द्रों के आसपास सफाई, स्वास्थ्य शिक्षा, बाल-शिक्षा महिला कल्याण आदि कार्यक्रम भी वर्ष भर आयोजित किए। वर्ष 83-84 में साक्षर किए गए प्रौढ़ों की संख्या 4834 थी। किन्तु वर्ष 1990 से तो रासेयो की प्रत्येक इकाई के लिए यह अनिवार्य कर दिया गया है कि उसे अपनी स्वीकृत छात्र संख्या के कम से कम आधे सदस्यों के माध्यम से कार्यात्मक साक्षरता को संपादित करना है जिसमें एक स्वयंसेवक के द्वारा एक से तीन निरक्षरों को साक्षर बनाने की बहुआयामी योजना है। राज्य संसाधन केन्द्र म०प्र० इंदौर द्वारा इस कार्य हेतु जन साक्षरता प्रवेशिकाएं (भाग-1, भाग-2, भाग-3) तैयार की है जिनके माध्यम से एक निरक्षर को 150 से 200 घंटे के भीतर ही साक्षर बनाया जा सकता है। प्रवेशिका की विषय वस्तु का चयन करते समय इस बात का ध्यान रखा गया है कि यह प्रौढ़ों की रुचि तथा आवश्यकता के अनुसार हो।

विगत दो वर्षों से म०प्र० शासन उच्च शिक्षा विभाग के प्रयत्नों के फलस्वरूप कार्यात्मक साक्षरता की सफलता की दिशा में रासेयो कर्मी आगे बढ़े हैं। वर्ष 1990 में जबलपुर में म०प्र० के प्राचार्यों एवं रासेयो अधिकारियों की बैठक में नवीन दिशायें तय की गयीं। वर्ष 1991 में भोपाल में आयोजित एक कार्यशाला में रासेयो के चिन्हित महाविद्यालयों के प्राचार्य, जिला संगठक रासेयो एवं राज्य संसाधन केन्द्र इंदौर के अधिकारियों से न केवल कार्यक्रम की समीक्षा की अपितु इसे व्यवहारपरक बनाये जाने के लिए सघन चर्चा की।

प्रसन्नता की बात यह भी है कि म०प्र० में अब केवल विशेष कैम्पों के दौरान ही नहीं अपितु नियमित गतिविधियों के अन्तर्गत भी कार्यात्मक साक्षरता को प्रथम स्थान दिया गया है। अवकाश के दौरान लगाए जाने वाले कैम्पों को– "कार्यात्मक साक्षरता के लिए युवा" नाम दिया गया है। म०प्र० के रासेयो कर्मी इस बात के लिए दृढ़संकल्पित हैं कि वे निरक्षरता के कलंक को मिटाने के लिए वह सब कुछ करेंगे जो एक उत्तरदायी नागरिक को करना चाहिए। इस दिशा में उन्हें उनके अधिकारियों का पूर्ण सहयोग प्राप्त हो रहा है।

अभी हाल ही में मुझे शासकीय महाविद्यालय शिवपुरी शा०उ०मा०वि०, शिवपुरी द्वारा लगाये गये एक संयुक्त शिविर में ग्राम सेसई सड़क (जिला शिवपुरी म०प्र०) जाने का अवसर प्राप्त हुआ। छात्रों ने 22 टोलियों के माध्यम से मात्र 10 दिन में करीबन 100 से ज्यादा निरक्षरों को साक्षरता की दिशा में आगे बढ़ाया तथा उन्होंने संकल्प लिया है कि वे इस ग्राम को कुछ समय में ही पूर्ण साक्षर कर देंगे। रासेयो के छात्र अब कहते हुए नजर आने लगे हैं– "एक है वादा निश्चित– वर्ष भर में एक गांव शिक्षित।"

तो आइये आप, हम सभी जितना संभव हो सके पढ़ायें-लिखायें और साक्षरता के जन अभियान में अपनी महती भूमिका निभाकर उन लोगों की विशेषकर युवाओं की हौसला अफजाई करें जो इस पावन काम में लगे हैं।

कमलागंज का बड़ा पुल, ए.बी. रोड
शिवपुरी (म.प्र.)

भूमि सुधार —एक विश्लेषण

□ राजेश कुमार व्यास □

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है बल्कि कहना तो यूँ चाहिए कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधार ही कृषि है। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व गांवों की कृषि भूमि का स्वामित्व जमींदारों या शासकों पर ही रहा और वे कृषक को मात्र जीविकोपार्जन के उद्देश्य से ही भूमि पर हल चलाने देते थे। किन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् स्थितियां बदलीं और भूमि जोतने वालों को "भूमि का अधिकार मिलना चाहिए" की विचारधारा ने जन्म लिया। इसी विचारधारा के तहत समान भूमि के वितरण तथा जोत की अधिकतम सीमा निर्धारित हो आदि विचारधाराओं ने भी जन्म लिया। देश को स्वाधीनता मिलने के पश्चात् सरकार द्वारा भूमि सुधार नीति को अपनाया गया जिसके तहत शोषण समाप्त करने व जमीन का समान वितरण करने हेतु महत्वपूर्ण प्रयास किये गये। यूं तो संपूर्ण देश में भूमि सुधार का कदम उपयोगी व महत्वपूर्ण माना गया परंतु राजस्थान में भूमि सुधार को एक क्रांतिकारी कदम कहा जा सकता है। वस्तुतः राजस्थान में शासन तंत्र बदलने के पश्चात भी इस प्रकार की पुरानी व्यवस्थाएं जारी रहीं कि आम कृषक अपनी भूमि का मालिक नहीं बन पाया। पूर्व में संपूर्ण भूमि पर शासकों या जमींदारों का स्वामित्व था, किसान को तो केवल पट्टे पर भूमि ही उपलब्ध थी और उसके बदले में उसकी उपज का अधिकांश भाग ले लिया जाता था। यही स्थिति कुछ स्थानों पर स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भी रही। परंतु भूमि सुधार कार्यक्रम के अंतर्गत सरकार द्वारा ऐसे प्रयास भी किये गये जिससे इस शोषण को समाप्त किया जा सके जिसमें सफलता भी मिली। भूमि सुधार कार्यक्रम वास्तव में राजस्थान के लिए वरदान साबित हुआ। भूमि सुधार के अंतर्गत राजस्थान में अनेक कदम उठाये गये हैं और वर्तमान में भी उठाये जा रहे हैं।

राजस्थान अध्यादेश

राजस्थान सरकार द्वारा किसानों को उनके द्वारा जोती जाने वाली भूमि पर से बेदखली को रोकने के लिए भूमि सुधार की दिशा में सर्वप्रथम जो कदम उठाया गया वह था किसानों को किसी भी रुप में मिली जमीन से बेदखल होने से रोकने के संदर्भ में बनाया गया "राजस्थान अध्यादेश 1949" जिसके अंतर्गत कहा गया कि जब तक यह अध्यादेश जारी रहेगा किसानों को उसकी भूमि से बेदखल नहीं किया जा सकेगा। इस अध्यादेश से किसानों को अत्यधिक लाभ हुआ और अधिकांश किसानों की अपनी स्वयं की भूमि हो गयी जिस पर वे कृषि उत्पादन करके अधिकाधिक लाभार्जन भी करने लगे।

भूमि सुधार के अंतर्गत ही राजस्थान की एक और महत्वपूर्ण उपलब्धि कृषि भूमि की अधिकतर सीमा निर्धारण करना भी रही। इसके अंतर्गत इस अधिकतम सीमा के पश्चात् अधिग्रहण योग्य भूमि को भूमिहीनों में बाँट दिया जाता है। राजस्थान काश्तकारी अधिनियम, 1955 को 1963 में संशोधित भी किया गया। भूमि की उर्वरा शक्ति के अनुसार विभिन्न स्थानों पर भूमि की अलग-अलग सीमा निर्धारित की गयी। प्रावधान को और अधिक प्रभावी बनाने हेतु 1973 में इसी दिशा में एक नया सीलिंग अधिनियम भी बनाया गया। इसी प्रकार अधिग्रहण की गयी भूमि को भूमिहीन किसानों, कमजोर वर्ग के लोगों, भूतपूर्व सैनिकों आदि में बांटने हेतु राजस्थान भू-राजस्व कृषि भूमि आवंटन नियम, 1970 एक महत्वपूर्ण कदम रहा।

सरकार द्वारा राजस्थान काश्तकारी अधिनियम में संशोधन भी किया गया जिसके अंतर्गत राजस्थान नहर परियोजना को छोड़कर पूरे राजस्थान में सीलिंग कानून क्रियान्वित किया गया। राजस्थान सीलिंग कानून के अंतर्गत जो भूमि अधिग्रहण की गई हैं वह घटिया किस्म की है। अतः जिन लोगों को ऐसी भूमि आवंटित की जाती है उन्हें भूमि विकास हेतु अनुदान भी उपलब्ध कराया जाता है। सितंबर 1991 तक 86,396 मामले निपटाये गये और 5,50,258 एकड़ भूमि को अधिग्रहण योग्य माना गया जिसमें से 4,33,738 एकड़ भूमि को लाभार्थियों में आवंटित भी किया गया।

कृषकों तथा सरकार के बीच मामलों की एक लंबी कड़ी होती है जिसे हटाने के लिए भी सरकार द्वारा महत्वपूर्ण प्रयास किये गये।

राजस्थान भूमि सुधार एवं सीमा पुर्नग्रहण अधिनियम, 1952 के अंतर्गत जमींदारों के पास भी केवल उसी भूमि को छोड़ा गया जो उनकी निजी काश्त के अंतर्गत थी। जागीरदारी समाप्त करने के लिए राजस्थान सरकार को जमींदारों की आय निर्धारित करनी पड़ी तथा आय के कुछ गुना तक राशि मुआवजे के रूप में भी देनी पड़ी। इस समस्त कार्य को व्यवस्थित ढांचा देने

के लिए भू-प्रबंध विभाग की स्थापना की गयी । सरकार व किसानों के मध्य बिचौलियों का काम करने वाले जागीरदारों और बिस्वेदारों की समाप्ति के लिए राजस्थान जमींदार व बिस्वेदारी उन्मूलन अधिनियम, 1959 भी भूमि सुधार के अंतर्गत पारित किया गया जिससे राजस्थान के 27,000 वर्ग मील क्षेत्र में फैली हुई 2.99 लाख जागीरों और 3.83 लाख बिस्वेदारियों को समाप्त कर दिया गया और किसान व सरकार का इससे सीधा संपर्क हो गया । मध्यस्थों की समूची कड़ी को समाप्ति के दृष्टिकोण से पारित 'राजस्थान भूमि सुधार एवं भू स्वामियों की संपदा आवंटित अधिनियम, 1963' के अंतर्गत राजा-महाराजाओं की भूमि को समाप्त कर दिया गया तथा काश्तकार द्वारा जोती जाने वाली भूमि पर संबंधित काश्तकारों को खातेदारी अधिकार मिल गये, इस प्रकार मध्यस्थों की अंतिम कड़ी भी इस अधिनियम से टूट गयी ।

राजस्थान के समान काश्तकारों को भूमि का स्वामित्व प्रदान करने व भूमि से संबंधित महत्वपूर्ण कानूनों के निर्धारण हेतु "राजस्थानी काश्तकारी अधिनियम, 1955" के माध्यम से भूमि सुधार हेतु मूलभूत परिवर्तन भी किये गये जिसके अंतर्गत सभी काश्तकारों को खातेदारी अधिकार मिल गये । अधिनियम के अंतर्गत यह व्यवस्था भी की गयी कि किसान भूमि के कुल भाग पर कृषि के विकास के लिए व अपनी सुविधा हेतु कुछ निर्माण कार्य कर सके । कमजोर वर्गों के लोगों की जमीनें अन्य व्यक्तियों को स्थानांतरित न होने पाये इस हेतु भी पर्याप्त व्यवस्थाएं की गयीं । इसी प्रकार वर्तमान में काश्तकारों को शोषण से बचाने हेतु राजस्थान सरकार ने काश्तकारी अधिनियम में आवश्यक संशोधन करके भूमि को रेहन आदि रखने की अवधि 10 वर्ष से घटाकर 5 वर्ष कर दी है । अधिनियम के अंतर्गत ही काश्तकारों को भूमि की अदला-बदली और कृषि उत्पादन में वृद्धि हेतु जोत में सुधार के भी अधिकार दिये गये, जमीन केवल जमीन जोतने वालों के पास ही रहे इसको ध्यान में रखते हुए खातेदार काश्तकार को एक बार में अधिकतम 5 वर्ष के लिए अपनी सब जमीन लीज पर देने का प्रावधान किया गया । इस बात की भी व्यवस्था की गयी जिससे एक बार लीज देने के पश्चात् दो वर्ष तक वह भूमि पुनः लीज पर नहीं दी जा सकती । जो व्यक्ति भूमि का गैर खातेदार होता है उसे अपनी जोत पर केवल पैतृक अधिकार होता है किन्तु 'राजस्थान भू-राजस्व कृषि प्रयोजनार्थ भूमि आवंटन नियम 1970' के अंतर्गत किसानों को भूमि गैर काश्तकारी अधिकार देकर आवंटित की जाती है । जो कृषक इन शर्तों का उल्लंघन नहीं करते उन्हें 10 वर्ष की अवधि पूरी होने पर खातेदारी अधिकार दिये जाने का भी प्रावधान है ।

किसानों को अपनी भूमि के विकास हेतु वित्तीय संस्थाओं व बैंकों से ऋण लेने में सुविधा आदि के लिए किसानों को अपनी भूमि के संबंध में पूरी जानकारी हो इसके लिए 'राजस्थान पास बुक अधिनियम, 1973' भी पारित किया गया । इसके अंतर्गत किसानों को अब अपनी भूमि संबंधित रिकार्ड प्राप्ति की एक लंबी प्रक्रिया से मुक्ति मिल गयी है । कृषकों को खेतों की अनार्थिक जोत व उन जोतों का बिखरा होना कृषि के विकास की एक बड़ी बाधा थी जिसे दूर करने हेतु चकबंदी अधिनियम को लागू किया गया । चकबंदी के माध्यम से दूर-दूर तक बिखरे व छोटे-छोटे भूमि के टुकड़ों की समस्याओं को निपटाने का प्रयास किया गया । इसी से कृषि विकास की गति को भी तीव्रता मिली ।

बेरोजगार युवकों, कारीगरों व कृषकों को आवास सुविधा देने व कुटीर उद्योग स्थापित करने के उद्देश्य से कृषि भूमि का आवासीय एवं वाणिज्यिक प्रयोजनार्थ आवंटन अधिनियम, 1971 तथा कृषि का अकृषि प्रयोजनार्थ उपयोग अधिनियम, 1961 बनाये गये । ये अधिनियम भी काफी महत्वपूर्ण कहे जा सकते हैं क्योंकि इनसे किसान अपनी भूमि को आवास व छोटे उद्योगों की स्थापना हेतु परिवर्तित करा सकता है । इसी प्रकार राजकीय बंजर भूमि, अनुपजाऊ व अकृषि भूमि पर वन विकास योजना के अन्तर्गत निजी वन विकास हेतु बंजर भूमि का आवंटन नियम, 1986 बनाया गया जिससे पर्यावरण संतुलन स्थापित हो सके । सड़कों के दोनों ओर पेड़ लगाने की दिशा में भी सरकार द्वारा महत्वपूर्ण प्रयास किये गये हैं । इन प्रयासों के अंतर्गत सड़क के किनारे लगाये गये पेड़ों व उसकी उपज पर कृषकों का मालिकाना हक दिया जाता है ।

राजस्थान में भूमि सुधार के लिए किये गये ये प्रयास विभिन्न नियमों व सरकारी अनुदानों से निरंतर क्रियान्वित किये जा रहे हैं । भूमि सुधार के इन प्रयासों ने कृषि को जहां एक ओर नया आयाम दिया है वहां किसानों को भी इनसे प्रोत्साहन मिला है । यही वजह है कि राजस्थान में कृषि विकास निरंतर विकास की ओर अग्रसर है । वस्तुतः मरुभूमि राजस्थान के लिए भूमि सुधार के इन प्रयासों की नितांत आवश्यकता थी, इस दिशा में अभी और अधिक प्रयासों की भी अपेक्षा है तभी राजस्थान भी कृषि विकास में अग्रणी राज्य बन सकता है ।

सह संपादक, मरू व्यवसाय चक्र,
धर्मनगर द्वार के बाहर,
बीकानेर-334 004 (राज.)

दूरदर्शन: सत्यम् शिवम् सुन्दरम्

□ डॉक्टर श्याम शर्मा □

हमारे सामाजिक जीवन में जनसंचार माध्यमों का काफी महत्व है। जनसंचार के साधनों में समाचार-पत्र, फिल्म, रेडियो, दूरदर्शन और वीडियो पत्रिकाओं ने हमारे ज्ञान का विस्तार किया है और ये विश्व को एक सूत्र में बांधने का प्रयास कर रहे हैं। भारत जैसे विकासशील देश में भी जनसंचार के विभिन्न माध्यमों ने जीवन के हर क्षेत्र को प्रभावित किया है। सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में संचार माध्यमों का प्रभाव दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। इस संदर्भ में देखा जाये तो रेडियो के बाद दूरदर्शन ने अपना क्षेत्र और अधिक व्यापक बनाया है। दूरदर्शन आज जनसंचार के एक सशक्त माध्यम के रूप में उभरा है। दूरदर्शन ने 33 वर्षों की विकास-यात्रा में सामाजिक परिवर्तन की दिशा में जहाँ एक ओर क्रान्तिकारी भूमिका निभाई है, वहीं दूसरी ओर उसने सूचना और मनोरंजन के क्षेत्र में नये द्वार खोले हैं। दूरदर्शन का प्रभाव महानगरों के दर्शकों पर ही नहीं पड़ा, अपितु ग्रामीण जनता भी इस से प्रभावित हुई है। आज देश के लाखों गांवों और देहातों के दूरदराज के इलाकों में दूरदर्शन की पहुंच होने लगी है। शहरी और ग्रामीण जनता के लिए दूरदर्शन जानकारी, शिक्षा और मनोरंजन का एक प्रमुख साधन बन गया है। इसी कारण दिनोंदिन इसकी लोकप्रियता बढ़ती जा रही है और वह हमारे जीवन का अभिन्न अंग बन गया है। दूरदर्शन कार्यक्रमों के साथ हमारा गहरा संबंध उसी प्रकार बन गया है जैसे समाज का यह जीवन साथी हो। दूरदर्शन के साथ अब यह रिश्ता ऐसा भी हो गया है कि वह समाज के अन्य रिश्तों को तोड़ता भी जा रहा है।

भारतीय समाज विभिन्न प्रकार की विषमताओं से भरा है। एक ओर हमारे देश में निरक्षरता है, गरीबी है, तो दूसरी ओर धर्म, जाति, भाषा, अंधविश्वास और रुढ़ियों ने अज्ञानता के कारण हमारे विकास कार्यों को अवरुद्ध किया है। ऐसी स्थिति में दूरदर्शन के साथ हमारा जो रिश्ता बना है, वह रिश्ता तभी सार्थक हो सकता है, जबकि समाज में नयी चेतना का विकास हो, ज्ञान का प्रचार-प्रसार हो। इसी लक्ष्य को ध्यान में रखकर ही हमारे देश में दूरदर्शन का आगमन हुआ। दूरदर्शन के प्रथम केन्द्र का उद्घाटन करते हुए भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने कहा था, "मुझे आशा है कि दूरदर्शन हमारे देश की जनता के दृष्टिकोण में व्यापकता लायेगा और वैज्ञानिक विचारधारा का प्रसार करेगा। सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध जनमत जागृत कर हमारी जनता को नवीनतम जानकारी देकर विकास की गति को बढ़ायेगा।" इस दृष्टि से देखा जाये तो दूरदर्शन अपने आरंभिक काल में तो इस लक्ष्य को पाने के लिए शिक्षाप्रद कार्यक्रमों को लेकर समाज के सामने आया और उसने अंधविश्वासों के विरुद्ध वैज्ञानिक सोच पैदा की और ग्रामीण विकास की गति को आगे बढ़ाया। किन्तु विगत कुछ वर्षों में दूरदर्शन अपने वास्तविक लक्ष्य से भटक कर 'मनोरंजन' का साधन मात्र ही बनकर रह गया है। दूरदर्शन के पिछले वर्षों के कार्यक्रम इस बात के साक्षी हैं कि उसके अधिकांश कार्यक्रमों में ग्रामीण संस्कृति, ग्राम्य जीवन, और बाल-निर्माण के संदर्भ में नैतिक मूल्यों से जुड़े कार्यक्रमों की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है। हाँ, इस दिशा में हम लोग, बुनियाद, रामायण, महाभारत, कहाँ गए वे लोग, और चाणक्य जैसे विशेष उल्लेखनीय धारावाहिकों ने सभी वर्गों के दर्शकों को प्रभावित किया। इसके अलावा हम हिन्दुस्तानी, विक्रम और बेताल, नींव, दादा-दादी की कहानियाँ, खिलती कलियाँ, चुनौती, सुबह, राज से स्वराज तक, अड़ोस-पड़ोस और फटीचर ऐसे धारावाहिक थे, जिन्होंने शहरी और ग्रामीण परिवारों पर अपनी गहरी छाप छोड़ी और बच्चों के लिए भी अधिक [illegible] एवं लोकप्रिय सिद्ध हुए। लेकिन बच्चों के विकास की ओर जितना ध्यान देना अपेक्षित था उतना नहीं दिया गया। इसी कारण दूरदर्शन के कार्यक्रमों के बारे में समय-समय पर अनुसंधान होते रहे हैं और कार्यक्रमों में सुधार लाने के लिए कई कमेटियां बनाई गईं जिसमें पी० सी० जोशी कमेटी ने दूरदर्शन कार्यक्रमों में सुधार के लिए अपनी रिपोर्ट में अनेक सिफारिश कीं। इन सिफारिशों को लागू करने पर दूरदर्शन के कार्यक्रमों में सुधार की संभावनाएं दिखाई देती हैं और दर्शकों के लिए दूरदर्शन के कार्यक्रम और अधिक लाभदायक हो सकते हैं। इसके अलावा दूरदर्शन कार्यक्रमों के बारे में अनेक

आलोचनाएं सामने आईं । कुछ आलोचकों ने दूरदर्शन कार्यक्रमों को सामाजिक परिवर्तन का सशक्त माध्यम समझा, तो कुछ आलोचकों ने इसे सांस्कृतिक परम्पराओं के लिए एक संकट माना । बच्चों को शिकायत यह रही है कि उनके लिए रोचक, ज्ञानवर्द्धक और शिक्षाप्रद कार्यक्रमों का अभाव रहा है । महानगरीय बच्चों और परिवारों को ध्यान में रखते हुए दूरदर्शन ने जो कार्यक्रम परोसे, उसके स्वाद के अलावा उनके सामने और कोई विकल्प नहीं था । इसी कारण बच्चों के जीवन पर अच्छे प्रभाव की बजाय बच्चों की कल्पनाशीलता को काफी धक्का पहुँचा । बच्चों का पढ़ाई के प्रति रुझान कम हुआ । बच्चों के भीतर अपने बड़ों के प्रति आदर भावना में कमी दिखाई देने लगी । बच्चों का रुझान उपभोक्तावादी संस्कृति की ओर बढ़ने लगा । इसके अलावा दर्शकों की यह शिकायतें सामने आयीं कि दूरदर्शन के अधिकांश कार्यक्रमों के पीछे व्यावसायिक हितों को ही अधिक ध्यान में रखा गया । उनका मानना था कि दूरदर्शन के कार्यक्रम "दर्शकों के लिए नहीं अपितु ग्राहकों के लिए होते हैं" । ग्राहकों के संबंधों को रेखांकित करते कार्यक्रमों में व्यावसायिकता और विज्ञापनों का इतना अधिक बोल-बाला होने लगा कि ग्रामीण परिवेश भी भौतिकवादी उपभोक्ता संस्कृति की ओर आकृष्ट होने लगा ।

विज्ञापनों से जहाँ उत्पादनों में तो वृद्धि हुई वहीं कुटीर उद्योगों को आघात पहुंचा । भारत जैसे कृषि प्रधान देश में जहाँ ग्रामीण दर्शकों की संख्या अनुपात में कहीं अधिक है, जिसमें सभी वर्गों के स्त्री और पुरुष और बच्चे भी शामिल हैं उनकी चेतना को कुंठित भी किया है ।

बच्चे स्वभाव से बड़े कोमल होते हैं चाहे वे ग्रामीण हों या शहरी । वे अपने आस-पास के जिस परिवेश में पलते हैं बड़े होते हैं, वह परिवेश बच्चों को बहुत कुछ सिखा देता है । उनमें अनुसरण की प्रवृत्ति दिखाई देती है । अतः वे जिन दूरदर्शन के कार्यक्रमों को देखते हैं उसका उनके जीवन पर स्थायी प्रभाव पड़ता है । बाल मनोविज्ञान के अनुसार ऐसा माना गया है कि 6 वर्ष की उम्र तक बच्चा अपने परिवेश से स्वयं को अलग नहीं कर पाता, किन्तु दस से 13 वर्ष के दौरान वह सामाजिक और राष्ट्रीय महत्व को समझने लगता है । देश प्रेम, राष्ट्रीयता मानवीय संबंधों के बारे में उसकी उत्सुकता बढ़ने लगती है । बच्चों में जो भावनाएं विकसित होती हैं, वह अपने आप विकसित नहीं होती, उसके पीछे समूचा परिवेश-घर-परिवार का वातावरण, स्कूली शिक्षा और संचार के विविध माध्यमों का योगदान होता है । इनके माध्यम से बच्चे अपनी जानकारी को बढ़ाते हैं । इस जानकारी को बढ़ाने में यदि उसके सामने 'विश्वबंधुत्व की भावना' के महत्व को समझाया जाय, नैतिक मूल्यों के प्रति उसकी आस्था को बढ़ाया जाय, लोक संस्कृति के प्रति उसकी रुचि को जागृत किया जाय तो बच्चों का बौद्धिक विकास सामाजिक परिवर्तन की दिशा में कारगर साबित हो सकता है और ये आगे चलकर भविष्य के अच्छे नागरिक बन सकते हैं ।

ऐसा देखा गया है कि हमारे ग्रामीण बच्चे निरक्षरता और कुपोषण के शिकार होते हैं । ग्रामीण विकास और बाल विकास के नाम से चलायी जा रही योजनाओं को दूरदर्शन अपने कार्यक्रमों में प्रस्तुत करे तो बच्चों का जीवन और अधिक संवारा जा सकता है ।

यह सही है कि बच्चों के जीवन को संवारने की दिशा में कुछ कार्यक्रम सामने आये हैं । इन कार्यक्रमों द्वारा बच्चों की जीवन शैली में परिवर्तन आया है । उनकी सोच समझ में वृद्धि हुई है । लेकिन अधिकांश कार्यक्रमों ने बच्चों की कल्पना शक्ति और सृजनशीलता को कुंठित किया है । वे अपनी लोक संस्कृति, परंपरा को भूलते जा रहे हैं । बच्चों में खेलने और पढ़ने की प्रवृत्ति में कमी आयी है । कई घंटों तक टी०वी० सेट पर आंखें लगाने के कारण उनकी आंखों पर गहरा असर पड़ता है और बचपन में ही उनकी आंखें चश्मे की मांग करने लगी हैं । उनके स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ा है । उनकी मानसिकता को टी०वी० ने इतना अधिक झकझोरा है कि उनके स्वभाव में चिड़चिड़ापन आने लगा है । जल्दी ही उन्हें थकान महसूस होने लगी है । बच्चों के व्यक्तित्व निर्माण के पीछे परंपरागत संस्कारों का बहुत बड़ा योगदान होता है । ये संस्कार भी अब धीरे-धीरे विदेश टी०वी० माध्यम के द्वारा लोप होते दिखाई दे रहे हैं । बच्चों को केवल टी०वी० और स्टार टी०वी० के विदेशी संस्करण ने इतना अधिक प्रभावित किया है कि बच्चे शहरी हों या ग्रामीण उनके भीतर विदेशी संस्कृति और विदेशी जीवन दृष्टि पनपती जा रही है और इस आकर्षण की चकाचौंध में हम विदेशी संस्कृति के रंग में ढलते जा रहे हैं । हम अपनी गौरवमयी परंपराओं, रीति रिवाजों और ग्रामीण संस्कृति को भूलते जा रहे हैं । दादा दादी की प्रेरणास्पद कहानियां, पुराण और उपनिषद् तथा पंचतंत्र की वे गाथाएं जिनमें नैतिक मूल्यों की शिक्षाप्रद कहानियों की भरमार होती है । ये बच्चों के संस्कारों पर गहरा प्रभाव छोड़ती हैं । वह प्रभाव अब न जाने

कहां लोप हो गया है । बच्चों का ग्रामीण संस्कृति और ग्रामीण मिट्टी से जो लगाव होता है, वह धीरे धीरे मिटने लगा है । मिट्टी की महक विदेशी 'सेंट' ने ली है । ये विदेशी 'सेंट' विदेशी टी०वी० कार्यक्रमों द्वारा शहरों से गांवों के दूर दराज के इलाकों में भी पहुंचने लगी हैं ।

केबल टीवी और स्टार टीवी का अपना दृष्टिकोण है, जो भारतीय ग्रामीण जीवन शैली के अनुकूल नहीं है । किन्तु इन विदेशी टीवी कार्यक्रमों ने भी भारतीय दर्शकों को अपनी ओर खींचना प्रारंभ कर दिया है और भारतीय दूरदर्शन महानगरों में अपने दर्शक खोता जा रहा है । ऐसी स्थिति में दूरदर्शन कार्यक्रमों को अधिक लोकप्रिय बनाने के लिए अनेक चुनौतियों का सामना करना होगा । यदि हमने अभी से इस दिशा में विचार नहीं किया तो भविष्य में हमें पछताना पड़ेगा । इसलिए दूरदर्शन की जिम्मेदारी है कि वह परिवर्तन और आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को गति दे, और राष्ट्र निर्माण के कार्यक्रमों को महत्व दें ।

यदि दूरदर्शन का उपयोग व्यापक स्तर पर किया जाए तो हमारे विकास की संभावनाएं नया रूप धारण कर सकती हैं । जनसंख्या और बेरोजगारी की समस्या पर नियंत्रण पाया जा सकता है । इसके अलावा दूरदर्शन अपने विविध कार्यक्रमों द्वारा बच्चों के संस्कारों को परिष्कृत भी कर सकता है । वह बच्चों को नयी नयी जानकारी देते हुए उन्हें शिक्षित करने, सामाजिक विषमताओं के विरुद्ध संघर्ष करने, उन्हें आत्मनिर्भर बनाने और नैतिक मूल्यों के प्रति आस्था जगाने का कार्य करने में भी सक्षम हो जाता है । आवश्यकता इस बात की है कि दूरदर्शन अपने विविध कार्यक्रमों में दर्शकों की रुचि को भी ध्यान में रखते हुए शहरी विकास, ग्रामीण विकास, और बाल विकास के कार्यक्रमों की ओर भी विशेष ध्यान दे ।

भारतीय समाज में दर्शकों की दूरदर्शन से अपेक्षाएं दिनोंदिन बढ़ती जा रही हैं । लेकिन दूरदर्शन इन अपेक्षाओं की पूर्ति नहीं कर पा रहा है और वह अभी तक बाहरी स्रोत पर ही अधिक निर्भर रहा है । दूरदर्शन को सामाजिक परिवर्तन की दिशा में, राष्ट्र निर्माण में, और व्यक्ति के निर्माण की ओर विशेष ध्यान देकर ऐसे कार्यक्रम तैयार करने चाहिए जो सभी वर्गों के लिए लाभप्रद हो सकें । इसलिए दूरदर्शन के सामने अनेक चुनौतियां हैं और इन चुनौतियों का सामना करते हुए इसे स्वस्थ मनोरंजन के साथ-साथ शिक्षाप्रद और जानकारी पूर्ण विविध कार्यक्रम तैयार करने होंगे ताकि वह सामाजिक परिवर्तन का सही प्रतिनिधित्व कर सके । यदि दूरदर्शन बच्चों को साक्षर नहीं बना पाया, उनकी कल्पनाशक्ति को प्रखर नहीं कर पाया और बच्चों में नया दृष्टिकोण नहीं जगा पाया तो दूरदर्शन की यात्रा अधूरी रहेगी । दूरदर्शन जिस लक्ष्य को लेकर हमारे सामने आया उस लक्ष्य को पाने के लिए उसे कितना ही संघर्ष क्यों न करना पड़े, उसके कार्यक्रमों को 'बहुजन हिताय' बनाने के लिए प्रयत्न करना होगा और समाज के सभी वर्गों को नयी चेतना, और नयी जीवन दृष्टि प्रदान करते हुए 'अंधेरे से उजाले की ओर' ले जाने से ही दूरदर्शन की सार्थकता सिद्ध हो सकेगी ।

65/8 सेक्टर-3
गोलमार्केट, नयी दिल्ली

"कुरुक्षेत्र" मंगाने का पता

व्यापार व्यवस्थापक
प्रकाशन विभाग
पटियाला हाउस
नई दिल्ली-110001

ग्रामीण शिक्षा और जनसंख्या

□ भानु प्रताप सिंह □

भारत जैसे विकासशील देश में जहाँ 72% लोग गांवों में बसते हैं वहाँ की शिक्षा और जनसंख्या की जो स्थिति वर्तमान में हमें देखने को मिलती है वह बड़ी ही शोचनीय है। इसका उपचार यदि समय रहते न किया गया तो वह दिन दूर नहीं जब चारों ओर अनीति और अनाचार का ही बोलबाला होगा तब हर कोई अपना सोचेगा, अपना पेट भरने के खातिर कोई भी गलत से गलत कार्य करने में भी न हिचकेगा।

वर्तमान में जो शिक्षा हम 5,246 कालेजों व 146 विश्वविद्यालयों के माध्यम से जन-जन तक पहुंचा रहे हैं। उसका सीधा-साधा उदाहरण हमें हर तरफ, हर जगह देखने को मिल रहा है। आज जब एक ग्रामीण युवक गांवों से निकलकर शहर की माटी का स्पर्श करता है और उसी में अपने को ढालता है और यदि ढल गया तो मुख फेर कर भी गांवों की माटी को चूमना तो दूर उसे छूना भी पसन्द नहीं करता। आखिर ऐसी स्थिति के लिए हम किसे दोषी मानें किससे इस उपचार के लिए कहें।

सन् 1951-52 में साक्षरता का प्रतिशत 19.3 था वहीं सन् 1982-83 में 36.23 व सन् 1991 में 52.11 प्रतिशत हो गया है। फिर भी जो स्थिति वर्तमान में है वह संतोष करने लायक नहीं कही जा सकती क्योंकि 1991 की जनगणना के अनुसार जहाँ भारत की कुल जनसंख्या 84,39,30,861 में पुरुषों की संख्या 43,75,97,929 व महिलाओं की संख्या 40,63,32,932 है वहीं साक्षरता के विषय में भारत की कुल साक्षरता 52.11 प्रतिशत में से 63.86 प्रतिशत पुरुष व 39.42 प्रतिशत महिलाएं ही साक्षर हैं।

यदि देश, गांव, समाज व वसुन्धरा को स्वर्ग का रूप देना है तो वर्तमान स्थिति से निपटने के लिए जन-जन को जगना और जगाना होगा, आंकड़ों पर ध्यान न देते हुए सही स्थिति का आंकलन करना होगा। जनसंख्या का भयावह रूप जो आज हमें बेचैन किए हुए है उसे हम सही व व्यवहारिक शिक्षा के माध्यम से ही दूर कर सकते हैं। इसके लिए हमें गांवों-गांवों में लोगों को खासकर ग्रामीण महिलाओं को साक्षर करना होगा क्योंकि सुप्रसिद्ध समाजसेवी श्रीमती दुर्गाबाई के अनुसार एक लड़के की शिक्षा एक व्यक्ति की शिक्षा है जबकि एक लड़की की शिक्षा पूरे परिवार की शिक्षा है।

आज यदि अनपढ़ ग्रामीणों को जनसंख्या नियंत्रण के वर्तमान तौर तरीके को बताने समझाने की कोशिश की जाती है तो वे पहले सामने ही नहीं आते और यदि आते भी हैं तो क्रोध व भय की स्थिति में क्योंकि उन्हें यह महसूस होता है कि ये लोग उनकी स्वतंत्रता में बाधक बन रहे हैं।

आज यदि सही आकलन करने को कहा जाये तो गांवों में एक से बढ़कर एक ऐसे परिवारों की कमी नहीं होगी जिनमें सदस्यों की संख्या 4 से 13 के बीच न हो। लगभग हर ग्रामीण युवती जो अभी यह भी नहीं जान पाई कि जीवन क्या है कैसे जीना है और जिसकी सारी की सारी अभिलाषाएं जो कुछ भी उसने शादी के पहले संजोयी थी शादी के कुछ दिन बाद तब चूर-चूर हो गईं जब उसे घर की चारदीवारी में बंद कर दिया गया। ऐसी ही ग्रामीण युवतियां छोटी सी आयु में ही 2 से 4 बच्चों की मां भी बन चुकी होती हैं और यही बच्चों का बोझ उसके परिवार समाज व देश के लिए नित नई चुनौतियां सामने खड़ी करने लगता है। जब मां बाप ही पढ़े लिखे नहीं हैं, दिन भर कमाने व तब शाम को खाने की नौबत है तो वे कहाँ से अपने बच्चों को पढ़ायेंगे। अतः ऐसे बच्चे दूसरों के हाथों की कठपुतली बन कर उन्हीं के इशारों पर नाचते हैं जिनसे वे एक रोटी पा रहे होते हैं।

आखिर इतनी कठोर, दयनीय, व दर्दनाक स्थिति क्यों बनी हुई है। क्या इसका कोई हल हमारे नीति निर्माताओं के दिमाग में नहीं उपज रहा है जो इससे समाज देश व गांवों को दूर ले जा सके? यदि समय रहते अब भी हम इसका हल न खोज सके तो वह एक न एक दिन अवश्य इस समाज में बिखराव आयेगा। आज आवश्यकता है सभी को शिक्षित व संस्कारवान बनाने की। जब सभी शिक्षित व संस्कारवान होंगे तभी आप जनसंख्या की समस्या की विस्फोटक स्थिति पर काबू पा सकेंगे।

ग्राम व पोस्ट—कालाकांकर
जिला-प्रतापगढ़, पिनकोड-229 408

छोटे परदे का बढ़ता प्रभाव

□ सुभाष चन्द्र सत्य □

"टेलीविजन राष्ट्रीय एकता का महत्वपूर्ण साधन है और गरीबी तथा अज्ञान से लड़ने का शक्तिशाली औजार भी । अपने देश की समृद्ध सांस्कृतिक, धार्मिक और सामाजिक राजनीतिक विरासत, इसके पुराने अतीत और स्वाधीनता संग्राम की गाथा के प्रति जनसाधारण की चेतना के विकास में टेलीविजन सहायक होगा ।"

ये शब्द एक अगस्त 1983 को दूरदर्शन के इलाहाबाद केन्द्र का उद्घाटन करते हुए तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने कहे थे । इस कथन से भारत में टेलीविजन माध्यम की एकता, प्रभाव एवं व्यापकता का पता चलता है ।

इसका तात्पर्य यह नहीं है कि देशवासियों में चेतना लाने, उनका ज्ञान बढ़ाने तथा देश के विकास में उनकी भागीदारी बढ़ाने में अन्य प्रचार माध्यमों का कोई योगदान ही नहीं है । भारत में, जहां करीब तीन चौथाई आबादी गांवों, दुर्गम पर्वतीय क्षेत्रों तथा दूर दराज के इलाकों में रहती है वहां लोगों से सम्पर्क बनाने के परंपरागत एवं आधुनिक किस्म के अनेक साधन मौजूद हैं । संपर्क या जनसंचार मुख्यतया दो तरीकों से होता है । एक तो सीधे व्यक्तिगत आधार है जिसमें आपने सामने बातचीत, सभाएं, सांस्कृतिक कार्यक्रम, लोकनाटक, मंच, संगीत सभाएं, कथावाचन, कवि सम्मेलन जैसे आयोजन शामिल हैं । इन सभी साधनों में बहुत सीमित स्तर पर जन सम्पर्क हो सकता है । दूसरा प्रकार है जनसंचार यानी मास कम्युनिकेशन । इसमें एक साथ हजारों, लाखों, करोड़ों लोगों तक कोई संदेश पहुंचाया जा सकता है । इस में अखबार, पत्रिकाएं, रेडियो, टेलीविजन आदि सम्मिलित हैं । आजादी से पहले, जब हमारे देश में रेडियो और टेलीविजन का अधिक प्रचलन नहीं था तब पत्र-पत्रिकाओं ने स्वतंत्रता आंदोलन का संदेश देश के कोने-कोने में पहुंचाने में महत्वपूर्ण योगदान किया । आजादी के बाद भी योजनाबद्ध विकास के बारे में विविध जानकारी और देश-विदेश की सूचनाएं देशवासियों को देने का दायित्व समाचार पत्रों ने बखूबी निभाया है ।

पत्र-पत्रिकाओं, विशेषकर भारतीय भाषाओं की पत्र-पत्रिकाओं की संख्या में दिनों दिन हो रही वृद्धि जनमानस पर इनके बढ़ते हुए प्रभाव का प्रमाण है । हिन्दी में आए दिन नए अखबार निकल रहे हैं तथा वर्तमान समाचार पत्रों की प्रसार संख्या में बढ़ोत्तरी हो रही है । जैसे-जैसे शिक्षा का प्रसार हो रहा है तथा साक्षरता की दर बढ़ रही है, समाचार पत्र पढ़ने वालों की संख्या में भी वृद्धि होती जा रही है । किन्तु इसके बावजूद इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि हमारे देश की परिस्थितियों को देखते अखबारों का प्रभाव क्षेत्र बहुत व्यापक नहीं है । इसके अनेक कारण हैं । पहला तो यह कि साक्षरता की दर अब भी इतनी कम है कि देश की आबादी के बहुत बड़े भाग, विशेषकर ग्रामीण तथा जनजातीय इलाकों में रहने वाले लोगों के लिए मुद्रित सामग्री की कोई उपयोगिता नहीं है । इसके अलावा हमारे बहुत से गांवों और दुर्गम इलाकों में पत्र-पत्रिकाएं पहुंच नहीं पाती क्योंकि सड़कों व परिवहन सुविधाओं की पर्याप्त व्यवस्था नहीं है । जहां पत्र-पत्रिकाएं पहुंच भी सकती हैं, वहां भी जनसाधारण की आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं है कि वे प्रतिदिन अखबार खरीद सकें । सबसे बड़ी बाधा यह है कि अखबारों में केवल समाचार एवं विचार उपलब्ध होते हैं, जबकि इलेक्ट्रॉनिक माध्यम रेडियो एवं टेलीविजन पर सूचना तथा ज्ञान के साथ-साथ मनोरंजन भी होता है । जिस कारण रेडियो और टेलीविजन का आकर्षण अखबारों की तुलना में कहीं अधिक है ।

श्रव्य एवं दृश्य माध्यम होने के कारण रेडियो सुनने और टी.वी. देखने के लिए पढ़ा-लिखा होना जरूरी नहीं है । भारत में फिल्मों की इतनी अधिक लोकप्रियता का कारण यही है कि सिनेमा मनोरंजन का ऐसा जनसाधन है, जिसका आनन्द लेने के लिए शिक्षित होने की जरूरत नहीं है । इसलिए रेडियो ने पिछले तीन-चार दशकों में देश के कोने-कोने में अपने प्रभाव का विस्तार कर लिया है । ट्रांजिस्टर के आगमन के बाद तो रेडियो के क्षेत्र में एक प्रकार की क्रांति ही हो गई । किसान खेतों में हल चलाते हुए, मजदूर सड़क या इमारत के निर्माण में काम करते हुए, रिक्शा वाला रिक्शा चलाते हुए, रेडियो सुन सकता है तथा पान की दुकानों, ढाबों, होटलों आदि हर जगह रेडियो की पहुंच सुलभ हो जाने से हर वर्ग के लोगों तक संदेश पहुंचाकर उनके जीवन में परिवर्तन लाना संभव हो सका । रेडियो के साथ-साथ टेलीविजन ने भी अपने पांव फैलाने शुरू किए और देखते-देखते उसने रेडियो को कई अर्थों में पीछे छोड़

दिया । इसका मुख्य कारण यह है कि रेडियो से तो केवल सुनकर किसी चीज को समझा जा सकता है जबकि टेलीविजन पर आवाज के साथ-साथ चित्र भी हमारी आंखों के सामने उभरते हैं, जिससे हम और आसानी से समझ सकते हैं । यद्यपि टेलीविजन की शुरुआत हमारे देश में 1959 में हो गई थी, परन्तु 1980 के दशक में विशेषकर रंगीन टेलीविजन शुरू होने के बाद इसके विस्तार की गति ने जोर पकड़ा और आज दूरदर्शन के दो चैनलों के साथ केबल टी.वी., उपग्रह टी.वी. तथा विदेशी टी.वी. प्रसारणों के उपलब्ध हो जाने से टेलीविजन हमारे जीवन का अनिवार्य अंग बनता जा रहा है । जिन गांवों में बिजली पहुंच चुकी है, वहां टेलीविजन भी पहुंच गया है और जन-जीवन को काफी हद तक प्रभावित कर रहा है ।

जैसा कि पहले ही बताया है कि केबल टी.वी. के माध्यम से अनेक विदेशी टी.वी. प्रसारण संस्थाओं के कार्यक्रम अब हम अपने सेटों पर देख सकते हैं और वीडियो के जरिए अपने मन-पसंद कार्यक्रम व फिल्में आदि देख सकते हैं, परन्तु हमारे यहां टी.वी. मुख्यतया सरकार के नियंत्रण में है और देश में लगभग 80 प्रतिशत टी.वी. दर्शकों के लिए आज भी टी.वी. का अर्थ दूरदर्शन कार्यक्रम ही है । दूरदर्शन सरकार और संसद के प्रति जवाबदेह है और इसकी नीति केवल मनोरंजन करने की न होकर देशवासियों को राष्ट्र निर्माण की मुख्यधारा से जोड़े रखने की है । केबल टी.वी. और विदेशी टी.वी. संगठनों का एकमात्र उद्देश्य मनोरंजन तथा उपभोक्ता वस्तुओं के विज्ञापन से धन एकत्र करना है । किन्तु दूरदर्शन केवल शहरी सम्पन्न एवं मध्यम वर्ग की पसंद के कार्यक्रमों तक सीमित रह कर अपने राष्ट्रीय दायित्व से पीछे नहीं हट सकता । यही कारण है कि मनोरंजक कार्यक्रमों, सीरियल, फिल्मों, चित्रहार, खेल प्रतियोगिताओं आदि के प्रसारण के साथ-साथ समाचार बुलेटिनों, समसामयिक कार्यक्रमों, परिचर्चाओं एवं प्रसिद्ध व्यक्तियों की भेंटवार्ताओं के माध्यम से ताज़ा घटना-क्रमों से दर्शकों को अवगत कराया जाता है । कृषि दर्शन, क्षेत्रीय भाषा कार्यक्रम, जन चेतना, जान है तो जहान है, नन्हीं दुनिया, पत्रिका, साहित्यिकी जैसे विविध कार्यक्रमों के माध्यम से दूरदर्शन अलग-अलग वर्गों से भावात्मक सम्बंध जोड़ने के प्रयास किए जाते हैं ।

यद्यपि टेलीविजन देखने वालों की अधिक संख्या शहरों तथा कस्बों में है, किन्तु ग्रामीण जीवन टेलीविजन के प्रभाव से अछूता नहीं है ।

टेलीविजन ने सबसे बड़ा काम तो यह किया है कि गांवों तथा दूर-दराज के क्षेत्रों को, जो पहले अलग-थलग व उपेक्षित रहते थे, राष्ट्र की मुख्यधारा से जोड़ दिया है । यह संपर्क दो तरफा है । जहां एक ओर राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्रों की प्रमुख गतिविधियों की जानकारी गांवों तक पहुंचती है, वहीं दूसरी ओर ग्रामीण जीवन के सम्बंध में विविध कार्यक्रमों, लोक कलाओं, लोकनृत्यों, लोक संगीत आदि की झलक पाकर दूसरे क्षेत्रों के लोगों में ग्रामीण जीवन के प्रति आत्मीयता एवं एकजुटता का भाव पनपता है । इस प्रक्रिया से राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता के तंतु और पुष्ट होते हैं ।

दूरदर्शन ने गांवों में साक्षरता तथा सामान्य चेतना के प्रसार में सचमुच उल्लेखनीय भूमिका निभाई है । राष्ट्रीय प्रसारण के अलावा क्षेत्रीय केन्द्रों से अनेक ऐसे कार्यक्रम दिखाए जाते हैं, जिनमें अत्यंत रोचक ढंग से अक्षर ज्ञान कराया जाता है । निर्धन, उपेक्षित तथा कमजोर वर्गों के अनेक लोग इन कार्यक्रमों से भाषा-ज्ञान प्राप्त करते हैं । इससे उनका अपना जीवन तो सुखी बनता ही है, वे अपने बच्चों को भी स्कूल भेजने को प्रेरित होते हैं । इस प्रकार साक्षरता तथा शिक्षा के रथ को आगे बढ़ाने की मदद मिली है ।

दूरदर्शन ने ग्रामीण जीवन में व्याप्त अनेक बुराईयों, कुरीतियों तथा हानिकारक मान्यताएं दूर करने में भी सहयोग दिया है । उदाहरण के लिए परिवार नियोजन, स्वास्थ्य रक्षा और स्वच्छता के बारे में प्रतिदिन रोचक कार्यक्रम तथा प्रेरक विज्ञापन प्रसारित किए जाते हैं, जो लोगों को नई दृष्टि अपनाकर अपना जीवन सुखी बनाने की प्रेरणा देते हैं । छोटे परिवार का सिद्धांत जन-जन तक पहुंचाने में टेलीविजन के योगदान को सबने स्वीकार किया है । सर्वेक्षणों से यह तथ्य सामने आया है कि रेडियो व दूरदर्शन के माध्यम से स्वास्थ्य, स्वच्छता, परिवार छोटा रखने, रोग निरोधक टीके लगवाने, शिक्षा जैसे क्षेत्रों में लोगों, विशेषकर अनपढ़, निर्धन तथा पिछड़े वर्गों में जागृति लाने और कई तरह की भ्रांतियां तथा अंधविश्वासों का असर कम करने में मदद मिली है । इसके अलावा सरकार द्वारा ग्रामीण विकास तथा बेरोजगारी और गरीबी दूर करने के लिए जो कार्यक्रम चलाए जाते हैं, उनके बारे में दूरदर्शन आम लोगों को जागरूक बनाता है जिससे लोग उन कार्यक्रमों से लाभ उठा सकते हैं । इन कार्यक्रमों की जानकारी के अभाव में बड़ी संख्या में उनके लाभों के हकदार इन लाभों से वंचित रह जाते हैं । भूमिहीन लोगों, मजदूरों, दिहाड़ी पर काम करने वाले तथा नियमित श्रमिकों को न्यूनतम वेतन और नौकरी से सम्बंधित अन्य अधिकारों के प्रति सचेत करने में भी टी.वी. कार्यक्रमों का योगदान रहता है । स्त्रियों को उनके सामाजिक, आर्थिक एवं

राजनीतिक अधिकारों के बारे में परिचित व जागरूक बनाने में दूरदर्शन कार्यक्रमों का हाथ है ।

टेलीविजन के माध्यम से न केवल अपने देश की बल्कि विदेशों में हो रही प्रगति, विकास तथा अन्य गतिविधियों के सम्बंध में ग्रामीण लोगों को जानकारी मिलती है, जिससे वे समूचे संसार के साथ जुड़ते हैं और नई पीढ़ी में कुछ नया कर गुजरने का उत्साह पैदा होता है । अब तो लोकसभा और राज्यसभा की आंशिक कार्रवाई का भी सीधा प्रसारण होने लगा है । इससे गांव के लोग, जो अखबार नहीं पढ़ सकते, जान सकते हैं और अपनी आंखों से देख सकते हैं कि उनके प्रतिनिधि संसद में किस प्रकार उनके हितों के लिए आवाज उठा रहे हैं । इस तरह दूरदर्शन भारत में लोकतंत्र की जड़ें और मजबूत बनाने का औजार साबित हो रहा है ।

इस प्रकार निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि ग्रामीण जीवन में रचनात्मक परिवर्तन लाने की टी.वी. में अपार क्षमता है । परन्तु दुर्भाग्यवश इस क्षमता का भरपूर उपयोग नहीं किया जा रहा है । अब केबल टी.वी. और उपग्रह टी.वी. से टक्कर लेने के कारण दूरदर्शन मनोरंजक कार्यक्रमों पर अधिक बल देने की योजनाएं बना रहा है, जिससे देश की अधिसंख्य जनता, विशेषकर ग्रामीण तथा जनजातीय क्षेत्रों की आबादी की आकांक्षाओं व आवश्यकताओं के अनुरूप कार्यक्रमों के प्रसारण में और कमी आने की आशंका होने लगी है । वैसे भी हमारे अधिकतर कार्यक्रम शहरी आकांक्षाओं व जीवन शैली पर आधारित होते हैं क्योंकि विज्ञापन देने वाली कंपनियों की वस्तुओं के ग्राहक शहरों में ही अधिक हैं । इसके अलावा ज्ञान बढ़ाने वाले अधिकतर कार्यक्रम अंग्रेजी में प्रसारित किए जाते हैं, जो अधिसंख्य ग्रामीण लोगों की समझ से बाहर होते हैं और फिर इस प्रकार के कार्यक्रमों के प्रसारण का समय प्रायः रात दस बजे के बाद होता है, जबकि गांव के लोगों की जीवन शैली में तक जागना उचित नहीं माना जाता । सबसे बड़ी बाधा यह है कि गांवों में टेलीविजन देखने वालों की संख्या अभी भी काफी कम है । इस महंगे माध्यम को खरीदने और उसके रख-रखाव का वित्तीय बोझ उठाना बहुत ही कम लोगों के बूते की बात है ।

इस सम्बन्ध में मध्य प्रदेश के देवास जिले के नेमावट गांव में किया गया सर्वेक्षण काफी हद तक सही तस्वीर सामने लाता है । 5000 की आबादी वाले इस गांव में उच्च जातियों के 100 से अधिक परिवारों के पास टी.वी. सेट हैं, जबकि अनुसूचित जातियों व जनजातियों के करीब 400 परिवारों में केवल 2 टी.वी. सेट हैं । गांव के स्कूल तथा पंचायत घर में 101 टी.वी. सेट मौजूद हैं जहां टी.वी. देखने वालों की भीड़ जुटती है । अन्य स्थानों की भांति इस गांव में भी चित्रहार तथा फिल्म सबसे लोकप्रिय कार्यक्रम हैं । गांव के लोगों की आम राय है कि टेलीविजन मनोरंजन का सस्ता साधन तो है लेकिन समाज के उत्थान में इसका कोई योगदान नहीं है, बल्कि यह परंपरागत संस्कृति को नष्ट करता है । शिक्षित युवकों का कहना है कि तत्काल ज्ञानवर्धक जानकारी तो मिलती है परन्तु ये कार्यक्रम ज्यादातर अंग्रेजी में होते हैं जो गलत है । दूसरी ओर अनपढ़ युवक दूरदर्शन को मनोरंजन का बेहतर साधन होने के कारण इसे जरूरी मानते हैं । इसके साथ-साथ लोगों ने यह शिकायत की कि बिजली की नियमित सप्लाई नहीं रहती । सेट खराब होने पर मरम्मत कराने में परेशानी होती है तथा स्कूल व पंचायत सेटों का उचित रख-रखाव नहीं होता ।

इसमें कोई संदेह नहीं कि दूरदर्शन के अनेक कार्यक्रम तथा उपभोक्ता वस्तुओं के विज्ञापन हमारी परम्परागत संस्कृति को विकृत कर रहे हैं । दूरदर्शन से ऐसी उपभोक्ता संस्कृति जन्म ले रही है जो पश्चिमी मूल्यों की पोषक है तथा भारतीय पारिवारिक जीवन पद्धति से मेल नहीं खाती । विदेशी टी.वी. कम्पनियों के प्रसारण तो और भी खतरनाक हैं । उनमें भारत के गांवों की झलक भी ढूंढ पाना मुश्किल है ।

इस प्रकार दूरदर्शन या टेलीविजन की क्षमता तथा ग्रामीण जीवन के लिए उनकी उपयोगिता भले ही उदासीन है, किन्तु उस क्षमता का लाभ सही ढंग से नहीं उठाया जा रहा । इसके विपरीत टेलीविजन के दुष्प्रभाव ग्रामीण जीवन पर अधिक पड़ने की संभावना बनती जा रही है । आठवीं योजना में देश के 95 प्रतिशत क्षेत्रों तक दूरदर्शन कार्यक्रम पहुंचाने का लक्ष्य है, किन्तु यदि कार्यक्रमों के स्तर व स्वरूप में परिवर्तन न किया गया तो इसके हानिकारक तत्व ग्रामीण भारत को विकृत बना देंगे और टेलीविजन उत्थान की बजाय पतन का साधन बन जाएगा । संतोष की बात है कि सरकार दूरदर्शन कार्यक्रमों में सुधार लाने के भी गंभीर प्रयास कर रही है । आवश्यकता इस बात की है कि ग्रामीण आकांक्षाओं के अनुरूप कार्यक्रम प्रसारित किए जाएं और गांवों में टेलीविजन सेटों की संख्या बढ़ाने तथा उनके रख-रखाव और बिजली की सप्लाई पर विशेष ध्यान दिया जाए तभी सामाजिक एवं सांस्कृतिक विरासत की रक्षा व समृद्धि का वह स्वपन पूरा हो पाएगा, जिसकी प्रारम्भ में चर्चा की गई है ।

1370, सेक्टर-12
आर.के. पुरम, नई दिल्ली-22

प्रौढ़-साक्षरता : समस्या एवं समाधान

□ डॉ० आनन्द तिवारी □

किसी भी राष्ट्र के आर्थिक एवं सामाजिक विकास को निर्धारित तथा प्रभावित करने वाले अनेकानेक घटक होते हैं, जो राष्ट्र अपने यहां लोगों को विकास की सभी आवश्यक सुविधायें उपलब्ध कराता है वही राष्ट्र विकास के मार्ग में अग्रणी होता है। मानवीय विकास के तीन महत्वपूर्ण घटक हैं–शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास एवं नागरिक सुविधाएं जिनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटक शिक्षा है। शिक्षा का आशय यहां सामान्य शिक्षा अर्थात् साक्षरता से है। साक्षरता के अंतर्गत न केवल अक्षर ज्ञान आता है अपितु पढ़ना, लिखना तथा साधारण जोड़-बाकी करना भी आते हैं।

साक्षरता मानवीय विकास का बहुत आवश्यक अंग है। साक्षरता ही वह विशेषता है जो मानव को अपनी पहचान बनाने में मदद करती है। यह अपनी बात दूसरों तक पहुंचाने का, नई बातें सीखने का और ज्ञान-विज्ञान के आदान-प्रदान का आवश्यक साधन है, इसीलिये साक्षरता केवल व्यावहारिक आवश्यकता नहीं है, बल्कि साक्षरता शिक्षा प्रवेश का द्वार है। साक्षरता और विकास का संबंध काफी निकट का है एक ओर साक्षरता आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक विकास का परिचायक है वहीं दूसरी ओर निरक्षरता आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक पिछड़ेपन का महत्वपूर्ण कारक भी है।

यह तथ्य निर्विवाद रूप से सत्य है कि साक्षरता आर्थिक विकास का मूल मंत्र हो या न हो लेकिन साक्षरता अपने आप में एक मानवीय उपलब्धि है और मानवीय विकास की ऊंची इमारत। इसका अर्थ यह नहीं है कि साक्षर होते ही मनुष्य प्रगति की सर्वोच्च सीढ़ी पर पहुंच जाता है। साक्षरता ज्ञान का मार्ग प्रशस्त करता है और ज्ञान वह उपकरण है जो मानवीय प्रगति को संभव बनाता है।

भारत में निरक्षरता–एक जटिल समस्या

इस सत्य से काफी लोग परिचित हैं कि विश्व की कुल जनसंख्या का लगभग 1/5 भाग निरक्षर है। मोटे अनुमान से विश्व में 100 करोड़ व्यक्ति ऐसे हैं, जिन्हें पढ़ना लिखना नहीं आता और यह तथ्य किसी से छिपा नहीं है कि विश्व में निरक्षरों की सर्वाधिक भीड़ भारत में है। विश्व में पाँच राष्ट्र ऐसे हैं, जिन्हें उच्च निरक्षरता वाले राष्ट्र कहा जाता है। वे हैं अफगानिस्तान, बंगलादेश, नेपाल, पाकिस्तान तथा भारत। 1991 की जनगणना के अनुसार भारत में साक्षरों का प्रतिशत 52 है। यह तथ्य विरोधाभासी अवश्य लग सकता है कि प्रत्येक जनगणना में साक्षरता प्रतिशत और साक्षरों की संख्या निरंतर बढ़ी है। जहां 1951 में राष्ट्र में 30 करोड़ लोग निरक्षर थे वहीं 1981 में निरक्षरों की संख्या 44 करोड़ के ऊपर थी। स्पष्ट है कि राष्ट्र के बड़े भाग का निरक्षर होना एक विशाल समस्या है।

साक्षरता और जनसंख्या नियंत्रण का सीधा संबंध है। केरल में साक्षरता का प्रतिशत (लगभग 90%) सर्वाधिक है और वहां जन्म दर न्यून है। इसके विपरीत राजस्थान में साक्षरता प्रतिशत (लगभग 24%) सबसे न्यून है और वहां जन्म दर सबसे ऊंची है। जो विचारक पर्यावरण विनाश के सवाल को आबादी के विस्फोट के साथ जोड़कर देखते हैं वे निरक्षरता के खतरे के प्रति सजग रहते हैं। आबादी की बाढ़ को कम किए बिना पर्यावरण पर पड़ने वाले असंतुलन को कम नहीं किया जा सकता है। आबादी पर नियंत्रण लगाने के लिए साक्षरता आवश्यक है।

भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् साक्षरता पर निरंतर बल दिया गया। साक्षरता के विशाल लक्ष्य को पूरा करने हेतु हमारे यहां 5 जनवरी, 1988 को भारतीय साक्षरता मिशन की स्थापना की गई जिसका उद्देश्य 1995 तक 15 से 35 वर्ष की आयु वर्ग के लोगों को शत-प्रतिशत साक्षर करना है।

निरक्षरता को समाप्त करना राष्ट्र का प्राथमिक उत्तरदायित्व है। इस संदर्भ में अनेक काम जरूरी हैं किन्तु सबसे आवश्यकता इस बात की है कि साक्षरता का महत्व समझा और समझाया जाये। जनसामान्य में यह चेतना फैलना आवश्यक है कि साक्षरता के दो कार्य हैं, एक तो वह साधन है दूसरी ओर साध्य है। साधन के रूप में साक्षरता की सबसे बड़ी भूमिका विकास के क्षेत्र में है। मानव को विकास का सबसे बड़ा संसाधन माना जाता है। वह पूंजी और तकनीक दोनों का महत्वपूर्ण संसाधन है मानव पूंजी का निर्माण करता है तथा मशीनों एवं तकनीकी

की रचना भी करता है । शिक्षित मानव राष्ट्रीय विकास का सबसे बड़ा शस्त्र है जिन राष्ट्रों में शिक्षा का स्तर ऊंचा है वे राष्ट्र ही आज विश्व में विकास के शिखर पर हैं ।

साध्य के रूप में साक्षरता तथा शिक्षा अपने आप में एक लक्ष्य है । शिक्षा ज्ञान के द्वार खोलती है साहित्य, दर्शन, विज्ञान, इतिहास तथा संस्कृति के द्वार साक्षरता की चाबी से ही खुल सकते हैं । कुछ तथाकथित समाजवादी लोगों का मानना है कि अशिक्षित ग्रामीण व्यक्ति भी सुसंस्कृत होता है उसे शिक्षित बनाने की आवश्यकता नहीं है । इन लोगों में कहीं न कहीं संकीर्णता अवश्य है । इन लोगों की सोच का बदलना आवश्यक है । इसी प्रकार जब कभी साक्षरता के संबंध में यह प्रश्न लोगों द्वारा किया जाता है कि क्या साक्षरता से व्यक्तियों का शोषण रोका जा सकता है? तो इसका प्रत्युत्तर यही है कि कभी नहीं! और शोषण का संबंध साक्षरता अथवा निरक्षरता से है ही नहीं क्योंकि शोषण के शिकार तो साक्षर व्यक्ति भी होते हैं किन्तु मौलिक अंतर यही है कि साक्षर व्यक्ति यह जानता है कि उसका शोषण हो रहा है जबकि निरक्षर व्यक्ति यह नहीं जानता । साक्षरता का उद्देश्य निरक्षर को इसी बात का ज्ञान कराना है ।

एक अन्य महत्वपूर्ण तथ्य जो कि साक्षरता अभियानों का कमजोर पक्ष उजागर करता है वह यह कि साक्षरता की मांग निरक्षर वर्ग द्वारा उत्पन्न किए बिना ही इसकी आपूर्ति निरंतर करने से निरक्षरों में साक्षरता की महत्ता निरंतर कम होती जा रही है । फलतः निरक्षरों के लिए उपयोगी बातें भी लाभप्रदता खो देती हैं । इसीलिए साक्षरता कार्यक्रम की सफलता हेतु ऐसे वातावरण का निर्माण करना होगा जिससे निरक्षर वर्ग द्वारा स्वमेव मांग उत्पन्न हो जाय । इन उपायों के अतिरिक्त इस कार्यक्रम की शत-प्रतिशत सफलता हेतु समाज का प्रत्येक वर्ग चाहे वह नौकरी पेशा वाला हो चाहे अन्य, सभी को एक जुट होकर इस समस्या को हल करने के लिए संकल्प लेना होगा । इस कार्य में स्वयंसेवी संस्थाओं एवं शिक्षण संस्थाओं, जिसमें प्राथमिक शिक्षण संस्थाओं से उच्च शिक्षण संस्थाओं की भागीदारी निर्णायक होनी चाहिए तभी इस विशाल हिमालयीन समस्या का निराकरण संभव होगा ।

सहायक प्राध्यापक वाणिज्य
शासकीय महाविद्यालय बण्डा
सागर (म.प्र.)

ग़ज़ल

मान सिंह "मान"

मुमकिन है उन्हें अब कि, कुछ करके दिखाना हो ।
दरिया से गुज़रना हो, दामन भी बचाना हो ।

किस काम का वो नादां, गो यार पुराना हो,
उससे है भला दुश्मन, कहते हैं जो दाना हो ।

कुछ लोग तो घबरा के, कहते हैं कि मर जायें,
मरने के लिए लेकिन, कोई तो बहाना हो ।

वो मौत मुबारक है, उस वक्त जो आ जाये,
जब आपके कदमों से, सर हमने उठाना हो ।

दुश्वार है कुछ कहना, संसार के बारे में,
मालुम नहीं किस पल, क्या सामने आना हो ।

नेकी का चलन रखना, चाहेंगे सभी लेकिन,
लाज़म है शराफत का, पहले सा ज़माना हो ।

यूं हमने बखेरा है, सरमाया-ए-हस्ती को,
जैसे हमें दुनियां में, फिर लौट के आना हो ।

जब आप नहीं होते, घर लगता है वीराना,
लगता है महकने वो, जब आप का आना हो ।

ए "मान" ये दुनिया भी, है कितनी अजब देखो,
हर शख़्स की ख्वाहिश है, उसका ही ज़माना हो ।

7/5 निरंकारी कालोनी
दिल्ली-110 009

उत्तर प्रदेश में भूमि संरक्षण कार्यक्रम

□ श्रीमती मंजू पाठक □

उत्तर प्रदेश में लगभग एक तिहाई कृषि योग्य भूमि किसी न किसी प्रकार से भू-क्षरण की समस्याओं से ग्रस्त है। प्राप्त आंकड़ों के अनुसार लगभग 36.74 लाख हैक्टेयर भूमि कटाव से ग्रसित है। बीहड़ों से लगभग 12.30 लाख हैक्टेयर भूमि प्रभावित है एवं लगभग 11.05 लाख हैक्टेयर भूमि क्षारीय एवं लवणीय समस्याओं से ग्रस्त है। जल प्लावन से प्रति वर्ष लगभग 18.7 लाख हैक्टेयर क्षेत्र प्रभावित हो जाता है जो कि भीषण बाढ़ के वर्षों में लगभग 40.00 लाख हैक्टेयर तक पहुंच जाता है।

भूमि संरक्षण कार्यक्रम के अंतर्गत छठी पंचवर्षीय योजना में लगभग 27.82 लाख हैक्टेयर कटावग्रस्त भूमि का उपचार भूमि एवं जल संरक्षण विधियों से किया जा चुका है एवं 1.06 लाख हैक्टेयर ऊसर भूमि का उपचार मृदा सुधारकों का प्रयोग कर किया जा चुका है।

सातवीं पंचवर्षीय योजना में कुल 6.36 लाख हैक्टेयर कटावग्रस्त एवं 1.10 लाख हैक्टेयर ऊसर भूमि के सुधार का लक्ष्य रखा गया था, जिसकी पूर्ति भी कर ली गयी है। 1985-86 से 1988-89 तक कुल 5.22 लाख हैक्टेयर कटावग्रस्त एवं 0.283 लाख हैक्टेयर ऊसर भूमि में सुधार किया जा चुका था और मार्च, 1990 तक 1,35, 753 हैक्टेयर कटावग्रस्त एवं 6,319 हैक्टेयर भूमि का और सुधार कर लिया गया।

उत्तर प्रदेश में भूमि संरक्षण हेतु अब तक निम्नलिखित कार्यक्रमों को अपनाकर भूमि संरक्षण एवं सुधार की गति को आगे बढ़ाया जा रहा है।

मृदा सर्वेक्षण

उत्तर प्रदेश में भूमि की उपयोगिता एवं मृदा सर्वेक्षण हेतु 10 जनपदों झांसी, फर्रुखाबाद, अलीगढ़, मेरठ, मुरादाबाद, प्रतापगढ़, बरेली, गोरखपुर, गाजीपुर एवं लखनऊ में मृदा सर्वेक्षण एवं परीक्षण इकाइयां स्थापित की गई हैं। वर्ष 1990-91 हेतु 3.00 लाख हैक्टेयर क्षेत्र के सर्वेक्षण का लक्ष्य रखा गया था।

रिमोट सेन्सिंग सेटेलाइट चित्रों द्वारा मृदा सर्वेक्षण

सातवीं योजना में सम्पूर्ण प्रदेश को समस्याग्रस्त भूमि के आंकड़े उपलब्ध कराने के उद्देश्य से रिमोट सेन्सिंग का व्यापक उपयोग करने हेतु 100.00 लाख रुपये का परिव्यय निर्धारित किया गया था। वर्ष 1985-86 में 1.40 लाख हैक्टेयर सर्वेक्षण के लक्ष्य के विपरीत 1.55 लाख हैक्टेयर एवं 1987-88 में 1.40 लाख हैक्टेयर एवं 1988-89 में 1.40 लाख हैक्टेयर सर्वेक्षण के लक्ष्य के विपरीत 0.36 लाख हैक्टेयर का लक्ष्य पूरा हुआ है। वर्ष 1989-90 में 1.40 लाख हैक्टेयर लक्ष्य के विपरीत मार्च, 1990 तक 1,89,219 हैक्टेयर लक्ष्य प्राप्त किया जा चुका है। वर्ष 1990-91 हेतु 1.00 लाख हैक्टेयर भूमि के सर्वेक्षण का लक्ष्य रखा गया था।

भूमि संरक्षण केन्द्रों के सुदृढ़ीकरण की योजना

भूमि संरक्षण केन्द्रों के सुदृढ़ीकरण हेतु उत्तर प्रदेश में 5 भूमि एवं जल संरक्षण केन्द्र रहमान खेड़ा (लखनऊ) मुजफ्फराबाद (सहारनपुर), मऊरानीपुर (झांसी) एवं पर्वतीय क्षेत्र में पौड़ी गढ़वाल तथा मझलार्क (अल्मोड़ा) में स्थित हैं। इन प्रशिक्षण केन्द्रों में भूमि एवं जल संरक्षण का बहुत अनुशासनात्मक प्रशिक्षण भूमि संरक्षण के कार्यक्रम में कार्य करने वाले कर्मचारियों को दिया जाता है। मार्च, 1990 तक 681 प्रशिक्षार्थियों को प्रशिक्षण दिया गया। वर्ष 1990-91 में 520 प्रशिक्षार्थियों को प्रशिक्षित किये जाने का लक्ष्य रखा गया था।

भूमि एवं जल संरक्षण : उत्तर प्रदेश में भूमि एवं जल संरक्षण कार्यक्रम का अधिकांश कार्य इसी योजना के तहत किया जाता है, जिसके अंतर्गत प्रदेश के मैदानी एवं पठारी भाग के 33 जनपदों में 37 भूमि संरक्षण इकाइयां कार्यरत हैं। वर्ष 1989-90 में 45,600 हैक्टेयर कटावग्रस्त भूमि उपचारित किये जाने के लक्ष्य के विरुद्ध मार्च, 1990 तक 49,915 हैक्टेयर भूमि की पूर्ति की गई।

बीहड़ भूमि के पुनर्वास की योजना

सातवीं योजनाकाल में इस योजना के तहत 20,000 हैक्टेयर भूमि के सुधार एवं संरक्षण का लक्ष्य रखा गया था। इस लक्ष्य के विपरीत वर्ष 1985-86 में 2,970 हैक्टेयर बीहड़ भूमि के सुधार के लक्ष्य के विपरीत 5,470 हैक्टेयर, वर्ष 1987-88 में 970 हैक्टेयर लक्ष्य के विपरीत 6,198 हैक्टेयर भूमि का सुधार किया गया। वर्ष 1988-89 में 990 हैक्टेयर क्षेत्र सुधार का लक्ष्य रखा गया था जिसके विपरीत 384

हैक्टेयर क्षेत्र का सुधार किया गया। वर्ष 1989-90 में इस योजना को समाप्त कर दिया गया।

सूखोन्मुख क्षेत्रीय विकास कार्यक्रम

यह केन्द्र पोषित योजना क्षेत्रीय विकास विभाग के नियंत्रण में प्रदेश के सूखोन्मुख जिलों– मिर्जापुर, झांसी, गोण्डा, बहराइच, बांदा एवं जालौन में क्रियान्वित की जा रही है। सातवीं पंचवर्षीय योजना में इस कार्यक्रम के तहत 1,00,000 हैक्टेयर भूमि सुधार का लक्ष्य निर्धारित किया गया था। वर्ष 1988-89 में 13,500 हैक्टेयर क्षेत्र के लक्ष्य निर्धारित किए गए थे, जिसके विपरीत 17,891 हैक्टेयर क्षेत्र का उपचार किया गया। वर्ष 1989-90 में 8,400 हैक्टेयर लक्ष्य के विपरीत मार्च, 1990 तक 14,876 हैक्टेयर भूमि का सुधार किया गया।

विशेष ऊसर भूमि सुधार योजना

यह योजना प्रदेश के 10 जनपदों–गाजियाबाद, एटा, कानपुर (देहात), हरदोई, उन्नाव, रायबरेली, फतेहपुर, सुल्तानपुर, वाराणसी तथा आजमगढ़ में चलाई जा रही है। इसके अन्तर्गत 10 भूमि संरक्षण इकाइयां स्थापित की गई हैं एवं प्रत्येक इकाई के लिए वर्ष 1989-90 में 1,000 हैक्टेयर भूमि उपचारित किये जाने का लक्ष्य रखा गया है, जबकि मार्च, 1990 तक 1,661 हैक्टेयर भूमि उपचारित की जा चुकी है।

ऊसर भूमि सुधारने के लिए एकीकृत योजना क्रियान्वित की जा रही है जो प्रदेश के ऊसर बाहुल्य 52 जनपदों में कार्यरत हैं। ये जिले हैं– सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठ, बुलन्दशहर, गाजियाबाद, आगरा, मैनपुरी, बरेली, बदायूँ, इलाहाबाद, प्रतापगढ़, कानपुर (देहात), इटावा, वाराणसी, गाजीपुर, बलिया, लखनऊ, उन्नाव, रायबरेली, सीतापुर, लखीमपुर, सुल्तानपुर एवं बाराबंकी इत्यादि। इस योजना के अंतर्गत 6,000 हैक्टेयर क्षेत्र उपचारित करने का लक्ष्य रखा गया है एवं मार्च, 1990 तक 3,978 हैक्टेयर क्षेत्र उपचारित किया जा चुका है।

वर्ष 1991-92 में भूमि संरक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत चलाई जाने वाली विभिन्न योजनाएं

उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा वर्ष 1991-92 में भूमि संरक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत निम्नलिखित कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं।

1. बीहड़ सुधार की योजना

यह योजना ई.ई.सी. के सहयोग से आगरा एवं इटावा जनपदों में चलाई जा रही है। इसके अन्तर्गत समस्त भूमि संरक्षण कार्य के लिए लघु एवं सीमान्त कृषकों तथा सामुदायिक कार्य हेतु 100 प्रतिशत अनुदान सरकार द्वारा दिया जाता है।

बीहड़ स्थिरीकरण एवं समतलीकरण हेतु बड़े कृषकों को 50 प्रतिशत का अनुदान दिया जाता है।

बीहड़ स्थिरीकरण एवं समतलीकरण हेतु अनुसूचित जाति जनजाति के बड़े कृषकों को 75 प्रतिशत का अनुदान दिया जाता है।

बड़े कृषकों को बीहड़ स्थिरीकरण एवं समतलीकरण रेवाइन रिक्लेमेशन हेतु 50 प्रतिशत अनुदान दिया जाता है जिसके अन्तर्गत अधिकतम अनुदान 5000/- रुपये तक का दिया जाता है जबकि इसी कार्यक्रम के अन्तर्गत अनुसूचित जाति के बड़े कृषकों को 75 प्रतिशत की दर से 5000/- रुपये तक का अनुदान दिया जाता है।

फसलोत्पादन कार्यक्रम के अन्तर्गत सभी कृषकों को 50 प्रतिशत की दर से अधिकतम 260/- रुपये का अनुदान दिया जाता है।

फसल प्रदर्शन के लिए सभी कृषकों को प्रति प्रदर्शन हेतु 300/- रुपये का अनुदान दिया जाता है।

2. वस्तु प्रभावित क्षेत्रों में बीहड़ सुधार की योजना

यह योजना कानपुर (देहात), जालौन, हमीरपुर, बाँदा, फर्रुखाबाद, मैनपुरी, फिरोजाबाद एवं इटावा जनपदों में चलाई जा रही है।

इसके अन्तर्गत समस्त भूमि संरक्षण कार्य हेतु लघु एवं सीमांत कृषकों तथा सामुदायिक कार्य हेतु 100 प्रतिशत का अनुदान दिया जाता है।

समतलीकरण हेतु सभी बड़े कृषकों को 50 प्रतिशत की दर से अधिकतम रु० 5000/- तक का अनुदान दिया जाता है। जबकि इसी कार्यक्रम के लिए अनुसूचित जाति के बड़े कृषकों को 75 प्रतिशत अनुदान की दर से अधिकतम 5000/- रुपये तक का अनुदान दिया जाता है।

अवरोध बांध वनीकरण हेतु सामान्य बड़े कृषकों को 50 प्रतिशत एवं अनुसूचित जाति के बड़े कृषकों को 75 प्रतिशत का अनुदान दिया जाता है।

समस्त भूमि संरक्षण कार्य एवं सामुदायिक कार्य हेतु लघु एवं सीमांत कृषकों को 100 प्रतिशत का अनुदान दिया जाता है।

3. भूमि सेवा योजना

यह योजना आगरा, इटावा, कानपुर (देहात), एटा, फतेहपुर, उन्नाव, रायबरेली, हरदोई, सुलतानपुर, आजमगढ़, वाराणसी, मैनपुरी, गाजियाबाद एवं जालौन जनपदों में चलाई जा रही है। इसके अन्तर्गत बोरिंग पम्पसेट हेतु सभी कृषकों को 100 प्रतिशत का अनुदान दिया जाता है।

ड्रेनेज कार्य हेतु अकृषक आवंटी को 50 प्रतिशत, कृषक

आवंटी (लघु कृषक) को 15 प्रतिशत, कृषक आवंटी (सीमांत कृषक) को 20 प्रतिशत एवं समस्त आवंटी (अनुसूचित जाति) को 30 प्रतिशत का अनुदान दिया जाता है।

ड्रेनेज कार्य, क्षेत्र विकास एवं हरी खाद हेतु सभी कृषकों को 100 प्रतिशत का अनुदान दिया जाता है।

मृदा सुधारक कार्य हेतु अकृषक आवंटी को 90 प्रतिशत एवं कृषक आवंटी को 75 प्रतिशत का अनुदान दिया जाता है।

फसल उत्पादन निवेश हेतु अकृषक आवंटी हेतु 33.3 प्रतिशत की दर से प्रथम वर्ष में 3000/- रुपये द्वितीय वर्ष में 1500/- रुपये एवं तृतीय वर्ष में 1500/- रुपये का अनुदान दिया जाता है, जबकि कृषक आवंटी को 8.3 प्रतिशत अनुदान की दर से मात्र प्रथम वर्ष में 1500/- रुपये का अनुदान दिया जाता है।

4. केन्द्र पुरोधानित ऊसर सुधार कार्यक्रम

यह कार्यक्रम बुलन्दशहर, उन्नाव, वाराणसी, सुल्तानपुर, इलाहाबाद, लखनऊ, सीतापुर, मेरठ, मुरादाबाद, मुजफ्फरनगर, गाजीपुर, कानपुर (देहात), प्रतापगढ़, लखीमपुर, बदायूँ, आगरा, गाजियाबाद, बलिया, बाराबंकी, इटावा, रायबरेली, बरेली, मैनपुरी, सहारनपुर एवं शाहजहाँपुर जनपदों में चलाया जा रहा है। इसके अन्तर्गत वनीकरण कार्यक्रम हेतु सभी आवंटियों को 100 प्रतिशत का अनुदान दिया जाता है। मृदा सुधारक कार्यक्रम के अन्तर्गत सभी कृषकों को 75 प्रतिशत का अनुदान दिया जाता है।

बोरिंग हेतु लघु, सीमांत एवं अनुसूचित जाति के कृषकों को क्रमशः 3000/- रुपये, 4000/- रुपये एवं 5000/- रुपये का अनुदान दिया जाता है।

हरी खाद के लिए समस्त कृषकों को 200/- रुपये का अनुदान दिया जाता है।

पम्पसेट हेतु लघु, सीमांत एवं अनुसूचित जाति के कृषकों को क्रमशः 1500/- रुपये, 2000/- रुपये एवं 3000/- रुपये का अनुदान दिया जाता है।

समस्त भूमि संरक्षण कार्य हेतु लघु एवं सीमान्त कृषकों को 100 प्रतिशत का अनुदान दिया जाता है।

5. गोमती योजना : यह योजना खीरी, सीतापुर, रायबरेली, लखनऊ, बाराबंकी, सुल्तानपुर, उन्नाव एवं प्रतापगढ़ जनपदों में लागू की गई है।

इसके अन्तर्गत समस्त भूमि संरक्षण कार्य हेतु लघु एवं सीमान्त कृषकों को 100 प्रतिशत का अनुदान दिया जाता है।

6. सोन योजना : यह योजना सोनभद्र जनपद में लागू की गई है। इसके अन्तर्गत समस्त भूमि संरक्षण कार्य हेतु लघु एवं सीमान्त कृषकों को 100 प्रतिशत का अनुदान दिया जाता है।

7. माताटीला नदी घाटी योजना : यह योजना ललितपुर जनपद में लागू की गई है। इसके अन्तर्गत समस्त भूमि संरक्षण कार्य हेतु लघु एवं सीमान्त कृषकों को 100 प्रतिशत का अनुदान दिया जाता है।

8. मैदानी योजना : यह योजना वाराणसी, बलिया, गाजीपुर, मिर्जा, इलाहाबाद, इटावा, आगरा, मैनपुरी, कानपुर (देहात) सीतापुर, मथुरा, लखीमपुर खीरी, गोण्डा, बस्ती, गोरखपुर, झांसी, जालौन, ललितपुर, सहारनपुर, मेरठ, हरिद्वार, मुजफ्फरनगर, गाजियाबाद, रामपुर, बिजनौर, बांदा एवं हमीरपुर जनपदों में लागू की गई है।

इसके अन्तर्गत समस्त भूमि संरक्षण कार्य हेतु लघु एवं सीमान्त कृषकों को 100 प्रतिशत का अनुदान दिया जाता है।

9. बारानी कृषि के विकास हेतु राष्ट्रीय जलागम विकास कार्यक्रम : यह योजना सहारनपुर, आगरा, बदायूँ, इटावा, कानपुर (देहात), फतेहपुर, इलाहाबाद, झाँसी, ललितपुर, जालौन, हमीरपुर, बांदा, सोनभद्र, मिर्जापुर, बलिया, सिद्धार्थनगर, महाराजगंज, देवरिया, खीरी, गोण्डा, बहराइच एवं सुल्तानपुर जनपदों में लागू की गई है।

इसके अन्तर्गत उत्पादन पद्धति (शस्य प्रदर्शन, 0.5 हैक्टेयर), एक फसली एवं दो फसली हेतु जल समेत क्षेत्र के सभी कृषकों के लिए क्रमशः प्रति प्रदर्शन 325/- रुपये एवं 525/- रुपये अनुदान दिया जाता है।

नमी संरक्षण (वानस्पतिक विधियों द्वारा) जल समेत सभी कृषकों के लिए 100 प्रतिशत का अनुदान 420/- रुपये प्रति हैक्टेयर औसत के रूप में दिया जाता है।

इस प्रकार उपर्युक्त कार्यक्रमों से स्पष्ट है कि उत्तर प्रदेश भूमि संरक्षण कार्यक्रम में सम्पूर्ण देश में अग्रणी भूमिका निभा रहा है।

ग्राम नगवा, पो० नगवा,
जिला बलिया (उ.प्र.)
पिनकोड-277401

स्वस्थ समाज मीडिया द्वारा दिया जा सकता है !

□ देवेन्द्र उपाध्याय □

स्वतंत्रता से पूर्व भारत में समाचार पत्रों की संख्या सीमित थी लेकिन उनका प्रभाव असीमित था। स्वतंत्रता आंदोलन में समाचारपत्रों-पत्रिकाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रही है और आंदोलन को आम जनता से जोड़ने में निस्संदेह समाचार पत्रों का स्थान अग्रणी रहा । "जब तोप मुकाबिल हो अखबार निकालो..." की उक्ति भी उसी दौर में प्रचलित हुई ।

तब वह जमाना था जब समाचार पत्र और पत्रिकाओं का प्रकाशन अंग्रेज साम्राज्यवादियों के खिलाफ संघर्ष के लिए किया जाता था । ब्रिटिश सरकार के दमन का सामना पत्रकारों को करना पड़ता था । समाचार पत्र/पत्रिकाओं पर भारी-भरकम जुर्माना किया जाता और उनके संपादक-प्रकाशक को जेल-यातना तक दी जाती । इसके बावजूद निर्भीक और साहसिक पत्रकारिता का वह युग ब्रिटिश शासकों के लिए चुनौतीपूर्ण था । तब पत्रकारिता व्यवसाय नहीं था बल्कि एक उद्देश्य था देश सेवा का ! कई समाचार पत्र और पत्रिकाएं तथा उनके संपादक-प्रकाशक ब्रिटिश शासकों के दमन के शिकार हुए ।

स्वतंत्रता के बाद वक्त बदला । पत्रकारिता व्यवसाय में बदल गयी । समाचार पत्र और पत्रिकाओं का प्रकाशन व्यवसाय के लिए किया जाने लगा । बड़े-बड़े उद्योगपतियों ने प्रकाशन भी शुरू कर दिये ताकि वे भी उद्योग के रूप में पनप सकें । इससे लाभ कमाने की प्रवृत्ति भी पैदा हुई । पत्रकारिता भी धीरे-धीरे पेशा बन गयी ।

ऐसा भी समय आया जब भारत सरकार ने समाचार पत्रों और पत्रिकाओं के पंजीकरण के लिए भारत के समाचार पत्रों के पंजीयन का कार्यालय (आर.एन.आई.) का गठन किया । आर.एन.आई. को पंजीकृत समाचार पत्रों एवं पत्रिकाओं के लिए कागज का कोटा रियायती दरों पर आवंटित करने का भी जिम्मा सौंपा गया । इसके साथ ही डी.ए.वी.पी. (विज्ञापन एवं दृश्य प्रचार निदेशालय) का भी गठन किया गया जिसे मान्यता प्राप्त पत्र-पत्रिकाओं को सरकारी विज्ञापनों का आवंटन करने का काम भी सौंपा गया । राज्य सरकारों ने अलग से जनसंपर्क निदेशालयों का गठन किया, उनका एक महत्वपूर्ण कार्य अपने-अपने राज्यों में पत्र-पत्रिकाओं को राज्य सरकार के विज्ञापन देना होता है ।

जब समाचार पत्र एक उद्योग के रूप में स्थापित हुआ तो कर्मचारियों के लिए भी सरकार ने समय-समय पर पत्रकार-गैर पत्रकार वेतन बोर्डों का गठन किया । जहां पहले पत्रकारिता एक मिशन थी वहीं स्वतंत्रता के बाद व्यवसाय बन गयी । जब उद्योग और व्यवसाय हो तो फिर मुनाफे का सवाल भी सामने आ जाता है । अब तमाम तरह के उत्पादनों के विज्ञापन पत्र-पत्रिकाओं में छपने लगे । पहले उत्पादक और निर्माता अपने उत्पादनों का स्वयं ही प्रचार-प्रसार करते थे लेकिन धीरे-धीरे विज्ञापन एजेंसियों का भी प्रार्दुभाव होने लगा और आज देश भर में सैकड़ों विज्ञापन एजेंसियां अरबों रुपये के बजट को विज्ञापनों के माध्यम से समाचार पत्रों/पत्रिकाओं को दे रही हैं । इन विज्ञापनों का उद्देश्य उपभोक्ताओं को अपनी ओर आकर्षित करना होता है ।

पहले आकाशवाणी का प्रार्दुभाव हुआ, जिसके माध्यम से समाचार और विभिन्न तरह के कार्यक्रम श्रोताओं तक रेडियो के माध्यम से पहुंचने लगे । लेकिन रेडियो तो बिजली से चलते थे । फिर ट्रांजिस्टर युग आया बैटरी सैलों से चलने वाले ट्रांजिस्टरों का । ट्रांजिस्टरों ने नयी धूम मचा दी । सुदूर और बीहड़ क्षेत्रों में भी अब समाचार और दूसरे कार्यक्रम पहुंचने लगे । फिर आकाशवाणी ने विज्ञापनों का प्रसारण भी शुरू कर दिया ।

एक नयी शुरूआत हुई टेलीविजन की । श्वेत श्याम टेलीविजन का युग । उसके बाद रंगीन टेलीविजन शुरू हुए । आज ऐसी स्थिति है कि जब बिजली किसी शहर, कस्बे या गांव में पहुंचती है–उसके साथ ही टेलीविजन भी पहुंच जाते हैं । उपभोक्ता वस्तुओं के निर्माताओं के लिए आम उपभोक्ताओं तक पहुंचने का सीधा रास्ता खुल गया ।

एक नयी संस्कृति उपजी । आम आदमी के मन में नये-नये उत्पादों की होड़ देखकर द्वन्द शुरू हो गया । करोड़ों दर्शकों से सीधे संवाद का रास्ता खुलने से करोड़ों दर्शकों के मन में भी नये-नये उत्पादों के उपयोग और उपभोग की उत्सुकता जगने लगी ।

समाचार पत्रों और पत्रिकाओं का प्रचलन एक सीमित क्षेत्र में ही बना रहता है । इसके साथ ही विविध विषयों की पत्रिकाएं उन विषयों के लोगों तक ही केंद्रित रहती हैं । महानगरों और कस्बों में समाचार पत्र दैनिक जीवन का अंग बन चुके हैं । समाचार पत्र आम आदमी के जीवन में इतना अधिक रच-बस गये हैं कि सुबह उठते ही चाय की प्याली के साथ समाचार पत्र पढ़ना आदत बन गयी है । किसी दिन समाचार पत्र नहीं आता है तो पाठक को शून्यता का बोध होने लगता है ।

समाचार पत्रों में विविधता होती है—राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय समाचारों से लेकर स्थानीय समाचारों की बहुलता और उसके अलावा नौकरियों के विज्ञापन । बेरोजगारों के लिये नौकरी के विज्ञापन देखना जैसे अनिवार्यता बन गयी है । सूचना और प्रसारण मंत्रालय के प्रकाशन विभाग द्वारा कई भाषाओं में 'रोजगार समाचार' पत्रिका प्रकाशित होने लगी जिसमें देश भर में विभिन्न क्षेत्रों में रोजगार समाचार दिये जाते हैं ।

सड़क और परिवहन से जुड़े ग्रामीण क्षेत्रों तक समाचार पत्रों और पत्रिकाओं की पहुंच है । दुनिया इतनी सिमट गयी है कि प्रकाशित होने के कुछ ही घंटों में समाचार पत्र/पत्रिकाएं सुदूर के ग्रामीण अंचलों तक पहुंच जाती हैं । आकाशवाणी और दूरदर्शन से भी रोजगार समाचार प्रसारित होते हैं । इसके साथ ही नयी-नयी जानकारियां कृषि के बारे में प्रसारित की जाती हैं ।

शहरों में ही नहीं बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों में भी पत्र-पत्रिकाओं और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ने एक नयी चेतना को विकसित किया है । खेल का क्षेत्र हो या विज्ञान का, कृषि का हो या राजनीति का—जन सामान्य को भी इनके बारे में जानने का अवसर मिलने लगा है । दुनिया में घट रही कोई भी महत्वपूर्ण घटना बहुत ही कम समय में सुदूर के ग्रामीण अंचलों तक भी पहुंच जाती है । इससे एक नयी जागृति तो शुरू हुई ही है ।

ग्रामीण क्षेत्रों में समाचार पत्रों-पत्रिकाओं और आकाशवाणी एवं दूरदर्शन ने जनसामान्य की चेतना को जगाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है । इससे सबसे बड़ा प्रभाव यह पड़ा है कि ग्रामीण क्षेत्रों के लोग बौद्धिक समझ के मामले में किसी से पीछे नहीं हैं ।

ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि की बहुलता है, उसके साथ ही बागवानी को भी महत्व दिया जाने लगा है । प्रयोगशालाओं में कृषि के क्षेत्र में की जाने वाली उपलब्धियों की जानकारी अब इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के माध्यम से बहुत कम समय में ही किसानों को मिल जाती है । कृषि की नयी-नयी तकनीकों, अनाज की नयी-नयी किस्मों, उर्वरकों एवं कीटनाशकों के उपयोग की जानकारी भी घर बैठे ही मिल जाती है । इसके लिए उन्हें अब कहीं दूर जाने की जरूरत नहीं पड़ती । सवाल है जानने और सीखने का—जो जानना और सीखना चाहते हैं उनके लिए जानना और सीखना यहां सबसे सुविधाजनक है । पंचायतों में टेलीविजन सैट लगाये जाने से यह और अधिक सुगमता से संभव हो सका है ।

महानगरों और बड़े शहरों में केबल टी.वी. की एक नयी संस्कृति का प्रार्दुभाव हुआ है । केबल टी.वी. की यह नयी संस्कृति केवल संपन्न वर्ग और नव धनाढ्यों के लिए ही अधिक उपयोगी है, जिनके पास अपने समय का सदुपयोग करने के लिए अकूत पैसा है । जिसे अपनी रोजी-रोटी की चिंता हो उसके पास न तो इतना पैसा है और न समय । केबल टी.वी. ने लोक साहित्य, संगीत एवं नृत्य को भी पीछे धकेल दिया है और उसके स्थान पर एक नयी विकृत संस्कृति पनपने लगी है ।

केबल टी.वी. उस किसान के लिए कितना उपयोगी हो सकता है जिसे अपनी फसल की चिंता है । उसके लिए तो अच्छी फसल होना ही सबसे बड़ी बात है । उसे अगर अपनी पैदावार बढ़ाने के लिए और अधिक जानकारी दूरदर्शन कार्यक्रमों से मिलती है तो वह उसे सहर्ष स्वीकारेगा । जिस बच्चे को अपनी पढ़ाई की चिंता है उसे अगर शैक्षिक ज्ञान दूरदर्शन से प्राप्त होता है तो वह उसे लेने में क्यों आनाकानी करेगा ।

इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के कई लाभ हैं—किसानों के लिए तो हैं ही । गृहणियों के लिए भी उपयोगी जानकारी खाली क्षणों में मिल जाती है । उन्हें मनोरंजन भी प्राप्त होता है और ज्ञान भी मिलता है । लेकिन जब भर्ती के कार्यक्रमों की भरमार होने लगे तो गांव की औरतों के पल्ले क्या पड़ेगा ? ऐसे में इस तरह के कार्यक्रम बनाये जाने/प्रसारित किये जाने की अधिक आवश्यकता है जिससे सुदूर के ग्रामीण अंचलों के वृद्धों, औरतों और बच्चों को नयी-नयी काम की बातें जानने को मिलें । यदि उन्हें काम की बातें आकाशवाणी और दूरदर्शन से जानने को मिलती हैं तो वे उन कार्यक्रमों के प्रति गंभीर भी रहेंगे ।

सबसे बड़ा नुकसान इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में प्रसारित होने वाले विज्ञापनों के कारण गरीब तबके का होता है—भड़काऊ विज्ञापनों के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में बच्चे भी उनकी तरफ आकर्षित हुए बिना नहीं रहते । तमाम तरह की उपभोक्ता

वस्तुओं की जैसी होड़ विज्ञापनों के माध्यम से दूरदर्शन पर रहती है—वह नयी पीढ़ी को क्या सही दिशा में ले जा रहे हैं ? यह सोचने की बात है । कीमती साबुन, खान-पान की चीजें और दूसरी महंगी उपभोक्ता वस्तुएं क्या आम आदमी की आर्थिक स्थिति के अनुरूप हैं ? ऐसे विज्ञापन तो उसके मन में हीन भावना ही पैदा करते हैं । यदि ऐसी उपभोक्ता वस्तुओं के विज्ञापन प्रसारित हों जो उसकी क्रय शक्ति और आवश्यकता के अनुरूप हों तो शायद उसके मन में हीन भावना पनपने का अवसर न आये ।

उदाहरण के रूप में हम देखते हैं कि अगर सुबह के कार्यक्रमों से रात तक के कार्यक्रमों के विज्ञापन देखें तो पायेंगे कि आम आदमी उनसे भ्रमित हो जाता है । कम से कम बच्चों के लिए तो कई वस्तुएं खरीदने की जिद पूरी कर पाना उसकी हैसियत से बाहर की बात होती है । ऐसे विज्ञापन हीनभावना के साथ ही अपराध बोध से ग्रस्त भी करते हैं ।

इसी तरह से कई तरह की पत्र-पत्रिकाएं भी प्रकाशित होती हैं—जो अलग-अलग तरह के पाठक वर्ग के लिए होती हैं । कुछ ऐसी भी पत्रिकाएं प्रकाशित होती हैं जो पाठकों के मन में कुत्सा या जुगुप्सा पैदा करती हैं—इनसे अबोध पाठकों के मन में अच्छा प्रभाव नहीं पड़ता । ग्रामीण क्षेत्र के लोगों के लिए तो वे व्यर्थ ही हैं । जो जिस क्षेत्र से प्रकाशित होती हैं उन्हें उन क्षेत्र के लोगों के हितों का भी ध्यान रखना चाहिए जिससे कि वे कुछ सीख सकें, ग्रहण कर सकें । यदि समाचार पत्र अपने प्रसार क्षेत्र के ग्रामीण पाठकों के हितों की अनदेखी करते हैं तो उस क्षेत्र के पाठक वर्ग के लिए भी वे ग्रहण योग्य नहीं होते । कुछ भाषायी समाचार पत्रों ने अपने-अपने प्रसार क्षेत्रों में ग्रामीण पाठकों तक अपनी पकड़ मजबूत की है । इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि वे उस अंचल के पाठकों के सुख-दुख के साथी बन गये हैं । अभावों और समस्याओं को हल करने में अगर वे समाचार पत्र रुचि रखते हैं तो पाठकों की उनके प्रति आत्मीयता बढ़ेगी ही । यही नहीं ग्रामीण क्षेत्रों की हलचलों की वे अनदेखी नहीं करते जिस तरह से राष्ट्रीय कहे जाने वाले समाचार पत्र करते हैं ।

जब हम ग्रामीण क्षेत्रों पर मीडिया के प्रभाव की बात करते हैं तो कई चीजें हमारे सामने आ जाती हैं । ग्रामीण क्षेत्रों में मीडिया की पहुंच के कारण लोगों में जागरूकता तो बढ़ी ही है पर इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ने ज़हां युवकों में शहरों के प्रति आकर्षण को बढ़ावा दिया है वहीं फैशन के प्रति भी उनको आकर्षित किया है । ग्रामीण जनों के मन में भी धनी बनने की ललक इससे पैदा हुई है । येनकेन प्रकारेण धनी बनने की ललक आर्थिक अपराधों को बढ़ावा ही देती है । पर यह बात भी सही है कि मीडिया के बढ़ते प्रभाव से सामाजिक कुरीतियों, अंधविश्वासों और रूढ़ियों के प्रति ग्रस्तता में कमी आयी है और वैज्ञानिक समझ लोगों में पैदा हुई है । जहां पहले परिवार नियोजन के प्रति वैराग्य या उपेक्षा की भावना किन्हीं संकोचों के कारण थी वह मीडिया के प्रभाव से कम हुई है । पहले बीमारियों से ग्रस्त ग्रामीण इलाज के लिए अस्पतालों में नहीं जाते थे । कहीं झाड़-फूंक कराकर भाग्य के भरोसे पड़े रहते थे लेकिन भाग्यवादी प्रवृत्ति काफी कम हुई है और अब बीमारियों के इलाज के लिए चिकित्सकों और अस्पतालों में जाना गलत नहीं समझा जाता । यह मीडिया का ही प्रभाव है ।

मीडिया के कारण ही कृषि उपज को बढ़ाने में मदद मिलती है और कृषि प्रणालियों में सुधार हुआ है । अब नदियों और समुद्र के किनारे बसे लोगों को बाढ़ और तूफान की पूर्व चेतावनी मिलने के कारण वे सजग हो जाते हैं । अपने बचाव के लिए वे पहले से ही व्यवस्थित होने लगते हैं ।

आज से एक-डेढ़ दशक पूर्व तक जिन आर्थिक एवं राजनीतिक जानकारियों को छोटे शहरों एव कस्बों के लोग नहीं पा सकते थे आज उसकी जानकारी शहरों से सैकड़ों मील दूर बसे लोगों तक को भी हो जाती है । खाड़ी युद्ध के बारे में रोज लोगों को जानकारी मिल जाती थी । विश्व की आर्थिक एवं राजनीतिक ही नहीं बल्कि विविध विश्व व्यापी हलचलों की तत्काल जानकारी मिलना आज आश्चर्य की बात नहीं रह गयी है । आज हर बड़ी घटना के बारे में गांव का आदमी शहर में रहने वालों के बराबर जानता है । यह दृष्टि मीडिया के कारण ही संभव हो सकी है । सूचना तंत्र की व्यापकता ने दूरी को कम किया है । जानने और समझने की उत्सुकता को बढ़ाया है । लेकिन इसका दूसरा पहलू यह भी है कि मीडिया के कारण समाज विरोधी तत्वों की सघनता भी बढ़ी है । विभिन्न तरह की ऐसी प्रवृत्तियां उभरने लगी हैं । केवल इसीलिए तो मीडिया का उपयोग बंद नहीं किया जा सकता ।

यदि हम व्यापक दृष्टि से देखें तो पायेंगे कि मीडिया का ग्रामीण क्षेत्रों में अच्छा प्रभाव पड़ा है और विकास की गति के साथ ग्रामीण जनों के जुड़ने की आकांक्षा इसी जागरूकता का प्रतिफल है ।

सी-7/18 ए, लारेंस रोड
दिल्ली-110035

जम्मू-कश्मीर में प्राथमिक शिक्षा की चहुंमुखी प्रगति

जम्मू और कश्मीर की हाल ही में प्राथमिक शिक्षा सर्व सुलभ कराने की संवैधानिक प्रतिबद्धता के लक्ष्य को जिस प्रकार प्राप्त किया गया वह अन्य राज्यों के लिए ईर्ष्या का विषय हो सकता है। प्रत्येक किलोमीटर पर लगभग सौ लोगों की आबादी के लिये एक प्राथमिक विद्यालय की स्थापना से जम्मू और कश्मीर ने संविधान के उस निर्देश को लगभग पूर्णतया संतुष्ट कर दिया है जिसमें शासन द्वारा 14 वर्ष की आयु तक के सभी बच्चों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराने के प्रयास करने के लिए कहा गया है। सर्व सुलभ प्राथमिक शिक्षा का राष्ट्रीय औसत प्रति दो किलोमीटर पर 200 व्यक्तियों के लिए एक विद्यालय का है।

जम्मू-कश्मीर सरकार अब शिक्षा अधूरी छोड़कर ही विद्यालयों से नाम कटाने वाले विद्यार्थियों की संख्या पर ध्यान दे रही है। यह संख्या काफी तेजी से बढ़ी है। मार्च 1991 तक राज्य में 8600 प्राथमिक विद्यालयों में 6 से 11 वर्ष के आयु वर्ग में कुल आठ लाख 76 हजार विद्यार्थियों का पंजीकरण किया गया। मगर इसी अवधि में उच्च प्राथमिक कक्षाओं में केवल तीन लाख 54 हजार विद्यार्थी ही भर्ती हुए। बीच में ही छोड़ने वालों की राज्य की 49 प्रतिशत की औसत दर इसी वर्ष 23 से 30 प्रतिशत की राष्ट्रीय दर से कहीं ऊंची है। ऐसे सभी प्रयत्न सरकार की ओर से जारी हैं जिससे बीच में पढ़ाई छोड़ने वालों की संख्या में कमी लाई जा सके। इसके लिये सरकार ने एक रणनीति तैयार की है।

रणनीति

राज्य और केन्द्र सरकारें इस प्रवृत्ति को बदलने के लिए करोड़ों रुपये खर्च कर रही हैं। इस उद्देश्य की प्राप्ति की नीति में निःशुल्क स्कूल की पोशाक और पाठ्य पुस्तकें उपलब्ध कराना शामिल है। विभिन्न विद्यालयों में 6 लाख स्कूली पोशाक बांटी जा चुकी हैं। पोशाक खरीदने के लिए सरकार ने अब तक चार करोड़ रुपये खर्च किए हैं। प्राथमिक विद्यालयों में छात्रों को निःशुल्क पाठ्य पुस्तकें उपलब्ध कराने की योजना के अंतर्गत एक करोड़ रुपये मूल्य की पुस्तकें बांटी जा चुकी हैं। अब शीतऋतु वाले क्षेत्र के छात्रों के लिए पुस्तकों की आपूर्ति के प्रयास किए जा रहे हैं। सरकार ने छात्रवृत्तियों की योजना में भी आवश्यक परिवर्तन किए हैं जिससे कि विद्यार्थियों को उचित प्रोत्साहन मिले। नई योजना में छठी और उससे ऊपर की कक्षाओं में पहले तीन स्थान पाने वाले छात्रों को नगद पुरस्कार देने का प्रावधान है।

सीमा क्षेत्र विकास कार्यक्रम के अंतर्गत, केन्द्र सरकार ने जम्मू-कश्मीर के सीमावर्ती क्षेत्रों में आधारभूत शैक्षिक सुविधाओं में सुधार के लिए 66 करोड़ रुपये से अधिक उपलब्ध कराए हैं। अब तक बना दी गई 752 स्कूली इमारतों के अतिरिक्त राज्य के सीमावर्ती क्षेत्रों में 646 प्राथमिक शालाओं सहित 681 अन्य इमारतें निर्माणाधीन हैं।

मूल ढांचा

ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड केन्द्र द्वारा प्रायोजित योजना है जो राज्य में लागू की जा रही है। 1987-88 में शुरु की गई इस योजना का उद्देश्य प्राथमिक विद्यालयों में सुविधाओं में और सुधार करना है। इसमें प्रत्येक पाठशाला के लिए पर्याप्त बड़े, और सभी मौसमों के अनुकूल न्यूनतम दो कमरों की एक इमारत, दो शिक्षक–यदि संभव हो तो इनमें से एक महिला हो तथा आवश्यक शैक्षणिक व पाठ्य सामग्री जैसे श्याम पट, नक्शे, चार्ट, खिलौने तथा कार्य अनुभव के लिए औजार आदि उपलब्ध कराने की योजना है। इसके अंतर्गत अब तक राज्य के 198 शैक्षणिक ब्लॉकों में से 141 ब्लॉकों को लिया जा चुका है। राज्य में अब तक तीन करोड़ रुपये इस योजना पर खर्चे जा चुके हैं। बाकी बचे 57 ब्लॉकों के लिए एक करोड़ 75 लाख रुपये की राशि स्वीकृत की गई है।

सरकार ने यह भी निर्णय किया है कि आगामी शैक्षिक सत्र में राज्य में एक अध्यापक वाली कोई भी पाठशाला नहीं रहेगी। चालू सत्र में ही 714 स्कूलों में दूसरे शिक्षक का प्रबंध किया जा चुका है। यही नहीं सरकार ने पहाड़ी क्षेत्रों में 50 और शहरी क्षेत्रों में 60 तक की छात्र संख्या वाले प्राथमिक विद्यालयों में तीसरे शिक्षक की नियुक्ति के लिए भी आंकड़े मांगे हैं।

सर्व सुलभ प्राथमिक शिक्षा का एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू

है, शिक्षकों का प्रशिक्षण । सरकार ने इस पर पूरा ध्यान दिया है । राज्य के प्रत्येक जनपद में जिला शैक्षणिक प्रशिक्षण संस्थान खोले जा रहे हैं । ये संस्थान मूल्यांकन और अनुसंधान कार्य भी करेंगे । अब तक इन संस्थाओं पर लगभग साढ़े चार करोड़ रुपये व्यय किये जा चुके हैं । एक तीव्र गति का प्रशिक्षण कार्यक्रम बनाया गया है जिसके अंतर्गत राज्य में प्रत्येक प्रशिक्षण संस्थान में हर महीने सौ शिक्षकों को प्रशिक्षित किया जाएगा ।

श्रव्य कैसेट

राज्य के स्कूलों में छात्रों के सांस्कृतिक ज्ञान को बढ़ाने के लिए एक नई योजना शुरू की गई है । इसके लिए राज्य के विभिन्न क्षेत्रों के मेलों, त्यौहारों और लोकसंगीत की विस्तृत जानकारी वाले श्रव्य कैसेट तैयार किए गए हैं । इनकी लगभग तीन हजार प्रतियां स्कूलों में बांटी गई हैं । ये कैसेट प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों में टू-इन-वन (ट्रांजिस्टर-टेप रिकार्डर) उपलब्ध कराने की केन्द्र सरकार की योजना का ही एक अंग है ।

सरकार राज्य में शिक्षा प्रणाली के सुचारु विकास के लिए समाज का भागीदारी और मदद लेने की एक योजना पर भी कार्य कर रही है । इसके अंतर्गत स्कूली शिक्षकों और पाठशालाओं के आसपास रहने वाले स्थानीय लोगों के बीच बेहतर संबंध स्थापित करने पर बल दिया जाएगा । दरअसल इसके अनुसार समुदाय को शिक्षा संस्थानों के कार्य की देखरेख करनी चाहिए क्योंकि अभिभावकों की यह जिम्मेदारी है कि वे यह देखें कि उनके बच्चों की पढ़ाई में बाधा न पड़े और उनको स्तरीय शिक्षा मिले ।

(साभार : पत्र सूचना कार्यालय)

पुस्तक समीक्षा

पुस्तक का नाम	:	**नियति के विधान**
लेखक	:	शिवजी तिवारी
प्रकाशक	:	ललिता प्रकाशन डी-30 पिपुल्स कोपरेटिव कॉलोनी कंकड़बाग, पो० लोहिया नगर पटना (बिहार)
मूल्य	:	पैंतीस रुपये

नियति और ईश्वर में पारस्परिकता का संबंध है । यह तन और मन को एक प्रणय संबंध में बांधती है । लेखक शिवजी तिवारी ने अपने कविता संग्रह "नियति के विधान" में ईश्वर को संबोधित करते हुए जीवन में व्याप्त विषमताओं को दूर करने का आह्वान किया है ।

कवि ने अपनी कविताओं में जीवन में व्याप्त विसंगतियों को बड़े ही सहज व सरल शब्दों में व्यक्त किया है । इन कविताओं में सहजता व बोधगम्यता का प्रवाह है । कवि ने इनमें समाज के सभी वर्गों और जीवन के भावों को समेटने का प्रयास किया है और वे अपने इस प्रयास में काफी हद तक सफल भी हुए हैं। इस कविता संग्रह में दुल्हन, युवा पीढ़ी औरतें, बचपन, इन्तजार, माँ की ममता इत्यादि कविताएं हैं। इस कविता संग्रह में कवि ने जीवन की समस्याओं को उठाया है । उसने अंधकार में भटकती युवा पीढ़ी का बड़ा ही मार्मिक व हृदयस्पर्शी चित्रण किया है । कवि कविता 'बिठा लो मुझे अपने पास में, कहता है :–

"मेरे मन का अंधेरा
दूर हो जाये
तुम्हारे प्रकाश से ।"

ये कविताएं जीवन की अनुभूतियां हैं और मन के पवित्र स्तर हैं । इन कविताओं में जीवन का यथार्थ है । ये कविता जीवन में व्याप्त 'अंधकार व समस्याओं, के कंटक पथ पर चलते हुए मनुष्य को ठंडी छांव सी प्रतीत होती है ।

समीक्षक : मदन लाल
256, भोपाल नगर, सोनीपत

ग्रामीण समाज में नारी-शिक्षा की बढ़ती समस्या

□ बेसल अहमद □

आज हम जहाँ भी नजर दौड़ाते हैं वैज्ञानिक आविष्कार अपनी बांहें फैलाए हमें अपनी ओर आकर्षित करते दिखाई देंगे। दिनोंदिन तीव्रगति से नगरीकरण का प्रभाव मानव-जीवन को और भी व्यस्त करता जा रहा है। इसके फलस्वरूप एक ओर जहाँ नगरों की संख्या में वृद्धि होती जा रही है वहीं इस का दुष्प्रभाव ग्रामीण-जीवन पर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। आज भी निरक्षरता गांव में जीवन व्यतीत करने वाले निवासियों के लिए एक बड़ी और जटिल समस्या बनी हुई है। यह शिक्षा ही है जो हमें सभ्य बनाती है और हमारे अन्दर एक कलाकार को भी जन्म देती है।

हमारा देश शताब्दियों से अपने अनोखे रंग रूप के कारण पहचाना जाता है। परंतु शताब्दियों के इस लम्बे इतिहास में कोई भी अध्याय ऐसा नहीं मिलेगा जो इस बात का साक्षी हो कि ग्रामीण-नारियों की शिक्षा पर उचित ध्यान दिया गया हो। आज भी गांव में बसने वाली इन नारियों का भाग्य और भविष्य केवल घरेलू कार्यों को कार्यान्वित करना रह गया है। उन का संसार आज भी अंधकारमय बना हुआ है और शायद उनके इस संसार में ज्ञान की किरण कभी नहीं फूट पाएगी। अधिकांश गांवों की नारियों का जीवन केवल खेत एवं घरेलू कार्यों तक ही सीमित हो कर रह गया है। यह हमारे समाज का दुखंत अध्याय नहीं तो और क्या है कि जिस नारी की कोख से हमारा अस्तित्व जन्म लेता है और जिस की गोद में पल कर हम एक नई दिशा की ओर अग्रसर होते हैं वही निरक्षरता के अंधेरे में भटक रही है। इस सत्य को लगभग सभी विद्वानों ने एकमत हो कर स्वीकार किया है कि बालक की पहली पाठशाला उस का परिवार होता है जहाँ वह अच्छे बुरे का अन्तर समझ पाता है। यदि किसी परिवार की नारी शिक्षित हो तो वह भलीभांति अपने बच्चों के लिए पथ-प्रदर्शक सिद्ध होगी और वह उनके नैतिक उत्थान का भरपूर ध्यान रखेगी। चूंकि बच्चे अपने अधिकांश क्षण माँ के आंचल के नीचे ही बिताते हैं इसलिए उनके आचरण और मस्तिष्क पर उन्हीं सब बातों का प्रभाव पड़ेगा जो वे अपनी मां से ग्रहण करेंगे। अतः यदि हम ऐसा कहें कि एक माँ अपने बच्चों के चरित्र की निर्मात्री होती है तो अनुचित नहीं होगा। आज जब हम ग्रामीण समाज में नारियों का दयनीय जीवन देखते हैं तो हमारा हृदय भर आता है। निरक्षरता के कारण नारियों को विभिन्न प्रकार की यातनाएं सहनी पड़ती हैं। पल-पल उन्हें विकट समस्याओं का सामना करना पड़ता है जिस पर स्वयं उन का अधिकार नहीं होता। यदि गांवों की इन भोली-भाली नारियों को शिक्षा एवं विभिन्न कलाओं से सुसज्जित कर दिया जाए तो वे आत्मनिर्भर हो कर अपना जीवन सफलतापूर्वक संवार सकती हैं और फिर उन्हें किसी भी प्रकार की रुकावट का सामना नहीं करना पड़ेगा।

भारतीय नारियों की बदहाली को देखते हुए समय-समय पर सुधारकों ने इनकी दशाओं में सुधार लाने के लिए भरसक प्रयास किए हैं। स्वयं हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने भी कई बार इनकी स्थिति में परिवर्तन लाने का प्रयत्न किया। अंग्रेजो सरकार के विरुद्ध अपने जन-आन्दोलन को आरंभ करने के दौरान उन्हें सदा गांव में जाना पड़ता था जहाँ उन्होंने नारियों की दयनीय हालत को काफी निकट से देखा। हमारे उर्दू तथा हिन्दी के लेखकों और साहित्यकारों ने भी स्त्रियों की शिक्षा का जोरदार समर्थन किया है। महान लेखक और पथ प्रदर्शक सर सैय्यद अहमद खाँ ने सदा ही नारी-शिक्षा के पक्ष में आवाज उठाई। हालांकि कुछ लोग उन के इस सराहनीय कदम का घोर विरोध करते रहे। आज जिस ढंग से नारियों में निरक्षरता बढ़ रही है उस में जिम्मेदार स्वयं उनके अभिभावक हैं जो उन्हें उच्च स्तर की शिक्षा दिलाना ठीक नहीं समझते। ऐसे लोगों में यह धारणा फैली हुई है कि शिक्षा केवल पुरुषों के लिए ही महत्वपूर्ण है स्त्रियों के लिए नहीं। उनके मतानुसार स्त्रियों का कर्त्तव्य विवाह के उपरांत घरेलू कार्यों को निभाने में है। अतः इन का शिक्षित होना व्यर्थ है। मेरे विचार से उनका ऐसा सोचना न्यायसंगत नहीं है क्योंकि शिक्षा के अभाव में ही आज हमें समाचार-पत्रों एवं दूरदर्शन और अन्य साधनों के माध्यम से यह मनहूस खबर सुनने को मिलती है कि फलां-फलां स्थान पर आत्महत्या हो गई या किसी को मार दिया गया। इसका कारण कुछ हद तक निरक्षरता

भी है । यदि हमारे समाज में अभिभावक अपनी बेटियों को शिक्षा के अतिरिक्त अनेक कलाओं से सुशोभित कर दें तो वे समय आने पर यातनाओं की दीवार लांघ कर अपने सहारे जीवन गुजार सकती हैं किन्तु निरक्षर रहने के कारण उन्हें तो सारी जिन्दगी कष्ट सहने पड़ते हैं ।

नारियों का शिक्षित होना इसलिए भी आवश्यक समझा जाता है क्योंकि एक शिक्षित नारी ही दायित्वों का निर्वाह भलीभांति कर सकती है । समय आने पर वह हितकारी परामर्श भी दे सकती है । ऐसी हालत में पारिवारिक जीवन में किसी भी प्रकार की कलह नहीं आ पाती है और वह परिवार समाज की दृष्टि में आदर्श का प्रतीक बन जाता है। हमें नारी-शिक्षा के प्रति जागरुक बनना होगा, नारियों को उनके अस्तित्व का मूल्य पहचानना होगा नहीं तो भविष्य को पतन की खाई में जाने से कोई नहीं बचा सकता ।

डेन ऑफ विज़डम

मो० फैजुल्लाह खान

दरभंगा-846 004 (बिहार)

भीतरी चाह

□ मदन लाल शर्मा □

गीत लिखने की चाह में अपने को भुला बैठा हूँ,
'जागते रहो' कहता रहा और खुद को सुला बैठा हूँ ।
मन की अंतरंगता के परिवेश में यह सब होता है,
मजे की बात तो यह है कि इस पर अंकुश नहीं होता है ।
इसी अनन्त चाह ने तो फैलाया यह सब जाल है
न तो इसमें कोई धोखा है और न ही कोई चाल है ।
टीस सी उठती है मन में, कहने की भी कुछ चाह है
अंधकार सा छा जाता है, दीखती नहीं राह है ।
रे मन उठ, निराश न हो, कुछ करके दिखा दे
शायद इस तरह यह प्रयास औरों को कुछ सिखा दे ।

ए बी-884, सरोजिनी नगर,

नई दिल्ली-110 023

सावरकुंडला अंबर परिश्रमालय में कार्यरत बहनें

□ प्रो० दिलीप भाई मर्चक □

"गांधी जी की अम्बर ओढ़नी प्रथम बेलास्टिक प्रक्षेपास्त्र थी जिसने लंकाशायर की मिलों को अचूक निशाना बनाया जो लक्ष्यभेदी सिद्ध हुआ।"

तारकी विनायी !

गुजरात राज्य के भावनगर जिले की 32 तहसीलों में से एक सावरकुण्डला भी है। सावरकुण्डला खादी ग्रामोद्योग के क्षेत्र में काफी आगे है। खादी और ग्रामोद्योग क्षेत्र में यहां करीब 45 साल से रचनात्मक कार्य चल रहा है। इसे ग्राम सेवा मंडल नामक संस्था चला रही थी। ये करीब 25 साल से उपरोक्त संस्था "अम्बर परिश्रमालय चला रही है" जिसमें 100 बहनें कार्यरत हैं। मैंने अम्बर परिश्रमालय में बहनों से मुलाकात की, तब ज्ञात हुआ कि अम्बर ओढ़नी पर बहनें एक दिन में औसतन 24 लच्छियां कात सकती हैं। इस प्रकार प्रत्येक बहन औसतन 19-20 रुपये कमा सकती है। इस विभाग में प्रतिदिन 55 से 60 हजार सूत की लच्छियां तैयार होती हैं। कार्यालय के सूत विभाग में हर महीने करीब एक लाख 40 हजार लच्छियां आती हैं जिसमें इस विभाग का 45 से 50 प्रतिशत हिस्सा होता है। इसके अतिरिक्त सावरकुण्डला शहर में तथा पास के गांवों में छः तकले की तथा दो तकले की अम्बर ओढ़नी चलती है। अतः बहनों के लिए वैकल्पिक रोजगार के रूप में अम्बर ओढ़नी उत्तम विकल्प है।

परिश्रमालय में एक दिन में ज्यादा से ज्यादा 50 और कम से कम 15 लच्छियां बनती देखी गई हैं। नई दरों के अनुसार एक लच्छी की कीमत 80 पैसे है। अतः एक दिन में ज्यादा से ज्यादा बहनें 40 रुपये कमा सकती हैं। जबकि कम से कम रोजी 12 रुपये मिलती है। कताई की दरों में वृद्धि होने से औसतन मजदूरी 19 रुपये मिलती है। औसत काम के नौ घंटे रहते हैं।

भारत गांव प्रधान देश है। देश की आबादी की 76 प्रतिशत जनता गांवों में बसती है। कृषि का व्यवसाय साल के आठ मास ही चलता है। बाकी के चार माह लोग बेकार रहते हैं। उनके लिए पूरक व्यवसाय की आवश्यकता होती है। उनके लिए खादी ग्रामोद्योग उपयुक्त है क्योंकि उन्हें रुई भी उसी जगह से मिलती है। चरखे आज आम कीमत में मिलते हैं। इसके लिए किसी तालीम की आवश्यकता नहीं है। स्थानीय कच्चा माल और बिक्री की सरलता खादी में है। खादी से गांव के लाखों बेरोजगारों को रोजी मिलती है। एक रुपये की खादी जब बनती है तो उसमें से 70 पैसे गरीब के हाथ में जाते हैं। इसके विपरीत मिल में एक रुपये का कपड़ा बनता है तो 80 पैसे मालिकों के हाथ में जाते हैं। खादी ही एक ऐसा व्यवसाय है जिसमें प्रति व्यक्ति खर्च बिलकुल कम होता है। अतः भारत जैसे गरीब देश में खादी उद्योग वटवृक्ष के समान फैले, यह जरूरी है। भारत जैसे देश में अधिक जनसंख्या तथा कृषि व्यवसाय के सीमित साधनों से खादी उद्योग द्वारा रोजगार के अवसर बढ़ते हैं।

महत्वपूर्ण बातें

वर्गीकरण : बहनों का आयु की दृष्टि से वर्गीकरण करने पर पता चलता है कि ज्यादातर बहनें मध्यम सामाजिक स्तर से आती हैं। आयु के आधार पर वर्गीकरण किया जाय तो 80 प्रतिशत बहनें 15 से 20 साल की हैं। 6 प्रतिशत बहनें 29 से 30 साल की आयु की हैं। केवल 4 प्रतिशत बहनें ही 41 से 50 साल के उम्र की हैं।

शिक्षा

शिक्षा की दृष्टि से वर्गीकरण किया जाये तो बहनों में शिक्षा का सामान्य स्तर देखने को मिलता है। 54 प्रतिशत से ज्यादा बहनें शिक्षित हैं।

रोजगार और आय

परिश्रमालय लम्बे अरसे से चल रहा है। लेकिन पिछले वर्षों में नये अम्बर चरखे और पूनी बनाने की व्यवस्था से एक अच्छा सुधार देखने को मिलता है। इससे प्रति व्यक्ति, प्रति घंटा उत्पादकता में बढ़ोतरी हुई है। परिश्रमालय की क्षमता 300 बहनों की है। परिश्रमालय सुबह 7.30 से शाम को 6 बजे तक कार्यरत रहता है बीच में एक घंटे का विश्राम मिलता है।

सुविधा और स्वास्थ्य

परिश्रमालय विशाल जगह पर पक्के मकान में, सम्पूर्ण हवा,

प्रकाश और सुविधायुक्त जगह पर चलाया जा रहा है। बहनों के लिए विश्रामगृह, भोजनालय, पानी और सेनिटेशन की पूर्ण व्यवस्था है। कार्यक्रमों द्वारा बहनों के व्यक्तित्व के विकास के लिए अनुकूल वातावरण भी प्राप्त होता है। यहां आ रही बहनें रोजगार के साथ-साथ अपने भविष्य की पूर्व शिक्षा लेती हैं। इससे स्वावलंबी और जिम्मेदारीपूर्वक कार्य करने की प्रेरणा मिलती है। इस कार्य से स्वास्थ्य पर कोई प्रतिकूल प्रभाव देखने को नहीं मिला। अधिकतर बहनें शादी होने तक यह कार्य सुचारू रूप से करना चाहती हैं तथा कुछ बहनें जो कि विधवा हो गई हैं या अन्य किसी कारण से, इस व्यवसाय को आजीवन करती हैं।

इस कार्य, में उत्पादकता में बढ़ोतरी करने के लिए 70 प्रतिशत बहनों ने सुझाव दिया कि आठ तकली वाले चरखे दिये जाने चाहिए। इसके उपरांत बॉलबेरिंग वाले चरखे का उपयोग, गति से कताई, पूनी बनाने, मोटर रखना तथा समय समय में साधनों में बदलाव लाने से उत्पादकता में वृद्धि होगी।

काम के वक्त संगीत/टेपरिकार्डर होने से काम करने का उत्साह बढ़ेगा और उत्पादकता में वृद्धि होगी। सभी बहनों को मजदूरी के साथ हर वर्ष बोनस दिया जाता है।

अंबर के व्यवसाय से 84 प्रतिशत परिवारों की स्थिति में सुधार आया है।

सुझाव

सावरकुंडला में 'ग्राम सेवा मंडल'' द्वारा बहनों की तरह भाइयों का भी परिश्रमालय शुरू करने का एक नया प्रयोग करना चाहिए।

बहनों की कार्यक्षमता और उत्पादन में वृद्धि लाने के लिए प्रोत्साहन इनाम देना चाहिए।

अविवाहित बहनों का भविष्य में शादी के बाद केन्द्र छोड़ना स्वाभाविक है इसलिए अविवाहित बहनों के साथ-साथ आर्थिक जरूरतमंद विवाहित बहनों की मात्रा में वृद्धि करना तथा प्रवृत्ति को स्थिर लम्बे समय तक बनाने का प्रयत्न करना चाहिए।

अंबर चरखों में नये टेक्नीकल सुधार, टेक्नीकल मार्गदर्शन और संचालन की व्यवस्था करनी चाहिए। इससे ज्यादा उत्पादन और आवक प्राप्त हो सकता है। इसलिए खादी कमीशन द्वारा इसमें पूरा सहयोग देना चाहिए।

इससे यह कहा जा सकता है कि खादी और ग्रामोद्योग की व्यवस्था रोजगार की दृष्टि से श्रेष्ठ है। इससे गरीबी और बेरोजगारी के निवारण के लिए भारत सरकार इस ओर ज्यादा ध्यान दे यह जरूरी है।

बी.आर.एस. कालेज,
शारदा ग्राम (गुजरात)

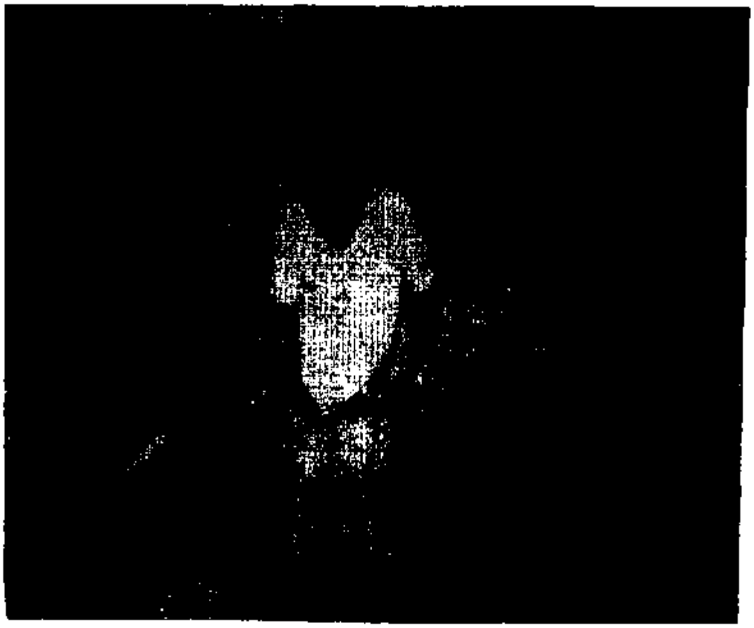

मीडिया : ग्रामीण संस्कृति संवार नहीं पाया

□ प्रेम कपाड़िया □

लगभग तीन दशक पहले अक्सर सुनाई पड़ता था : जब शाम होते ही बच्चे गांव के चौक में जमा हो जाते थे और टेर लगाते... "आओ बालकों खेलेंगे, गुड़ की भेली फोड़ेंगे, चम्पा फूल बखेरेंगे ।"

यह टेर सुनते ही बच्चे घरों से निकल गली या चौक में जमा हो जाते थे । लेकिन आज यह दृश्य यह माहौल गायब हो गया है और इसके साथ ही गायब हो गई है वह सारी सामाजिकता जो कई प्रकार के खेलों के माध्यम से बच्चों में विकसित होती थी क्योंकि आज बच्चे अपना सारा समय टी०वी० देखने में व्यतीत कर देते हैं ।

और आज... आज यह सब कहीं गायब हो चुका है । वह तो जानता है एक-दो-तीन-चार-पांच या एक बरस के मौसम चार पांचवां मौसम प्यार का जैसे गीत । मगर प्यार की भावना उसमें इतनी नहीं जितनी तीन दशक पहले होती थी । आज उसकी आंख मिचौली का समय चित्रहार या नाटक या फिल्म निगल जाती है । और इन सबके बाद रही सही कसर क्रिकेट ने समाप्त कर दी ।

ग्रामीण संस्कृति पर टी०वी० का हमला

दूरदर्शन व अन्य प्रचार माध्यमों ने ग्रामीण पृष्ठभूमि पर भी हमला किया है । सुबह होते बैलों के गले में बंधी घंटियों की आवाजें गूंजने लगती थीं । गाय, भैंसों, बकरियों की दिनचर्या शुरू होने के संकेत मिलते थे... उनकी आवाजें दूरदर्शन के चित्रहारों से दब कर रह गई हैं। गांवों का जो बच्चा सुबह उठकर खेतों की दूब पर नंगे पांव चल कर स्वास्थ्य लाभ प्राप्त करता था, वह चित्रहार के फिल्मी गाने सुनने के लिए सबसे पहले टी०वी० खोलता है । अगर उसके घर नहीं है तो कहीं और भागता है । ग्रामीण संस्कृति, चौपाल पर बड़े-बूढ़ों का उपस्थित होना, सब खत्म होता जा रहा है । बच्चे तो अपना गांवों का लोकगीत नहीं गुनगुनाते बल्कि फिल्मी गीत गुनगुनाने लगते हैं । एक मायने में दूरदर्शन से ग्रामीण बच्चों का मानसिक और बौद्धिक शक्ति का विकास भी हुआ है । लेकिन दूसरी ओर गांवों का बच्चा किसी महापुरुष को चाहे न पहचानें, फिल्मी हीरों को झट से पहचान लेगा । लेकिन इसके साथ यह कहने में भी हिचक नहीं होनी चाहिए कि गांवों की संस्कृति लोक गाथाएं, परम्परा दूरदर्शन से प्रभावित हुई हैं ।

बच्चों की मानसिकता पर कुप्रभाव

बच्चे अब उतना नहीं खेलते । अपनी दिलचस्पी की दूसरी चीजों के लिए टी०वी० उन्हें समय नहीं दे रहा है । मां-बाप को भी यह जानने की फुरसत नहीं कि बच्चे क्या कर रहे हैं ? क्या देख रहे हैं ? क्या सीख रहे हैं । बच्चे एक तरह से अकेले पड़ गए हैं । यह गंभीर मुद्दा शहरों के लिए तो था ही अब ग्रामीण क्षेत्रों के लिए भी हो गया है ।

इतना जरूर कहा जा सकता है कि गांव के बच्चों पर मीडिया का कुप्रभाव ही पड़ा है । दूरदर्शन के पास कोई भी ऐसा प्रभावशाली धारावाहिक नहीं है जो बच्चों की मानसिकता में यह बैठा सके कि तुम्हारे गांवों की कला, संस्कृति का क्या महत्व था ? कैसे-कैसे रीति रिवाज थे...कैसे-कैसे किस्से थे । सब कुछ आधुनिकता का लबादा ओढ़ाकर पेश किया गया है । आप आज मीडिया का प्रमुख अखबार या चाहे कोई भी अखबार उठाकर देख लीजिये, बच्चों के सर्वांगीण विकास की बात तो दूर भरपूर सामग्री भी नहीं मिलेगी...हाँ बाल साहित्य के स्थान पर विज्ञापन जरूर अपना कब्जा करता नजर आ जाएगा ।

साहित्य की बात छिड़ी है तो लगे हाथ यह जिक्र करना जरूरी हो जाता है कि मीडिया के कारण ही पुस्तक-प्रकाशन बहुत अधिक प्रभावित हुआ है । जो बच्चे पहले नंदन, चंपक या सुमन-सौरभ पढ़ना पसंद करते थे या बाल उपन्यास पढ़ना पसंद करते थे लेकिन टी०वी० ने उन्हें इनसे दूर फेंक दिया है । यही कारण है कि बड़ी-बड़ी बाल-पत्रिकाओं के प्रकाशन का संकट उठ खड़ा हुआ है । यह बहुत गंभीर समस्या है ।

इन सब कारणों के बावजूद सरकार पूरी कोशिश कर रही है कि बच्चों के लिए धारावाहिक, अच्छा साहित्य, प्रचारित और प्रसारित हो, इस संदर्भ में सरकार अपना कर्त्तव्य बखूबी निभा रही है । दूरदर्शन पर पोटली बाबा को दिखाकर दूरदर्शन अपना कर्त्तव्य निभा रहा है । फिर भी अभी और अधिक जागरूकता की आवश्यकता है ।

सुझाव

यूं तो दूरदर्शन और सरकार अपने स्तर से बच्चों के विकास के लिए कुछ-न-कुछ प्रसारित या प्रचारित करती है फिर निम्न सुझावों पर गौर किया जा सकता है :-

1. सर्वप्रथम सरकार को सरकारी और पब्लिक स्कूलों के प्रधानाध्यापकों के यह निर्देश जारी करें कि वह बच्चों को ऐसे रचनात्मक कार्य दें कि वे दूरदर्शन या केबल टी०वी० कम से कम देखें ।

2. सरकार अपने स्तर से हर कस्बे और गांव का सर्वे कराए कि राज्य स्तर पर किस जिले के कितने गांवों में दूरदर्शन और केबल टी०वी० देखा जाता है । वहां उसी अनुपात से बाल कार्यक्रम दिखाने की व्यवस्था हो ।

3. छुट्टी के दिन को छोड़कर किसी भी कीमत पर दिन में फिल्म न दिखाई जाए । चुनावों के नतीजों के समय जिस तरह फिल्में दिखाई जाती हैं, वह बहुत अशोभनीय लगता है । फिल्म के इंतजार में बच्चे रात को जागते हैं जब कि चुनाव परिणाम से उसे कुछ लेना-देना नहीं होता ।

4. बच्चों के विकास और चरित्र निर्माण के लिए फिल्मों को नियत तय समय में दिखाएं ।

5. अधिकतर फिल्में पारिवारिक रिश्तों, बच्चों के बड़ों के प्रति कर्त्तव्य की, या बाल चरित्र निर्माण की ही दिखाई जानी चाहिए ।

6. केन्द्र सरकार को हरेक राज्य को यह निर्देश देने चाहिए कि अपने राज्य के मीडिया से ग्रामीण बच्चों के निश्चित कार्यक्रम दिखाएं जिनमें, दैनिक अखबारों को भी शामिल किया जाए ।

7. राज्य स्तर के प्रत्येक गांव में दूरदर्शन केन्द्र हो... जिनमें बच्चों के लिए स्वस्थ और शिक्षाप्रद सीरियल, फिल्में दिखाई जाएं ।

8. दूरदर्शन को अपने कार्यक्रमों में व्यापक परिवर्तनों की जरूरत है । जहां राजनीतिक गतिविधियों को अधिक दिखाया जाता है वहां उनका समय कम करके बाल विकास कार्यक्रम, साक्षरता, खेल-कूद और मां-बाप के कर्त्तव्यों की जानकारी दी जाए ।

9. दूरदर्शन पर हिंसा, चोरी, तस्करी, बलात्कार के दृश्यों वाली फिल्मों पर कड़ाई से रोक लगे ।

अगर इन सुझावों को एक चौथाई भी माना जाता है या इन पर गौर किया जाता है, तो जहां ग्रामीण विकास में मदद मिलेगी वहीं महानगरों में बढ़ते अपराधों पर भी रोक लगेगी । लेकिन क्या सरकारी कार्रवाही कुछ कर पाएगी यह सोचने का विषय है । फिर भी इतना तय है कि अगर मीडिया व्यवसाय अपना कर्त्तव्य ईमानदारी से निभाएं तो कोई वजह नहीं है कि ग्रामीण बच्चों के ज्ञान में आशातीत सफलता प्राप्त न की जा सकती हो ।

भारतीय सामाजिक संस्थान
10-इन्स्टीट्यूशनल एरिया
लोदी रोड, नई दिल्ली-3

लेखकों के लिए

रचना और अन्य प्रकाशनार्थ सामग्री भेजने वालों से अनुरोध है कि रचना भेजते समय वे कृपया इन बातों का ध्यान रखें:—

रचना संक्षिप्त एवं उसकी प्रस्तुति रोचक होनी चाहिए। इसमें उपलब्ध करायी गयी जानकारी अप्रकाशित और प्रमाणित होनी चाहिए।

रचना दो प्रतियों में डबल स्पेस में टाइप की हुई हो जो सात-आठ पृष्ठों से अधिक की नहीं होनी चाहिए। विषय प्रतिपादन में उपशीर्षकों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

रचना के साथ ब्लैक एंड व्हाइट फोटो भी आमंत्रित हैं।

विकास कार्यक्रमों में प्रचार माध्यमों की भूमिका

□ संजीव पुरी □

हमारा उद्देश्य गरीबी का उन्मूलन करना है। वास्तव में गरीब जो हमारे ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में प्रभावित होते हैं इस विशाल मानव संसाधन के लिए एक संपदा है। इस मानव संपदा के लिए समाज में मानवीय मूल्यों की स्थापना का बड़ा महत्व है। भारत में प्राचीन काल से ही मानवीय मूल्यों के प्रचार-प्रसार की परम्परा रही है। प्राचीन समय में प्रचार माध्यम भले ही आधुनिक समय की तरह नहीं रहे हों, तथापि यह निर्विवाद सत्य है कि भारत के सन्तों ने देश के कोने-कोने में भ्रमण करके लोगों के दुख दर्द को समझा। हमारे जितने भी महापुरुष हुए हैं, उन्होंने गांव-गांव घूमकर जन सम्पर्क को महत्व दिया और इसके माध्यम से दरिद्रनारायण की सेवा और परोपकार के आदर्शों का प्रचार-प्रसार किया।

भगवान बुद्ध, भगवान शंकराचार्य, संत रामकृष्ण परमहंस और स्वामी विवेकानंद ने समाज की समस्याओं को समझने और मानवीय मूल्यों की स्थापना की दिशा में जो सफलता पाई, उनसे आज हमें और हमारे प्रचार माध्यमों को बहुत कुछ सीखना है। हमें भी आज की समस्याओं को जानने, समझने के लिए उनके जैसी लगन, ईमानदारी और समाज के प्रति प्रतिबद्धता को अपनाना होगा।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने असंख्य दरिद्र भारतवासियों को आजादी की लड़ाई में सम्मिलित होने के लिए आह्वान किया तथा उन्हें विश्व की सबसे बड़ी सामाजिक हुकूमत से टक्कर लेने के लिए प्रेरित किया। गांधी जी ने मुख्यतः मौखिक प्रचार तथा मुद्रण प्रचार द्वारा इस वृहत्तम प्रचार में सफलता पाई। उन्होंने अन्य प्रचार माध्यमों द्वारा स्वतन्त्रता संग्राम के प्रचारकों जैसे कवियों, गायकों, कथावाचकों, नाटक मंडलियों, नर्तकों, कठपुतली वालों आदि को भी प्रोत्साहित किया। अपनी अद्भुत व्यक्तित्व द्वारा उन्होंने विशाल जन समुदायों को आकर्षित किया तथा राष्ट्र आंदोलन में सम्मिलित होने की प्रेरणा दी। पंडित जवाहर लाल नेहरू ने भी इसी प्रकार अपने असाधारण व्यक्तित्व एवं उत्कृष्ट भाषणों द्वारा स्वतंत्रता संग्राम के लिए लोक उत्थान का कार्य किया। अपने भाषणों द्वारा उन्होंने भारत के ग्रामीण व पिछड़े वर्गों के लोगों में देश-विदेश की विभिन्न महत्वपूर्ण घटनाओं एवं उपलब्धियों के बारे में जागरुकता पैदा की। वे जन समुदायों को अपने सरल व्याख्यानों द्वारा अपने स्तर पर ले जाते तथा इस प्रकार इन अनपढ़ ग्रामीणवासियों को भी गहन तथ्यों का बोध हो जाता।

आजादी के बाद से मुद्रण और दृश्य-श्रव्य माध्यमों का काफी विकास हुआ है। भारतीय ग्रामवासियों के साथ जन सम्पर्क कायम करना एक महत्वपूर्ण विषय है। हमें केवल उन्हें शिक्षित या सूचित ही नहीं करना अपितु उन्हें प्रोत्साहित भी करना होगा। लोगों का सहयोग हम तभी पा सकते हैं जब हम उन्हें ग्रामीण विकास, आधुनिक तकनीकी उपलब्धियों आदि से अवगत कराएं।

भारत सरकार का जोर आज ग्रामीण विकास कार्यक्रमों व नीतियों पर अधिक है। बैंक, वाणिज्य संस्थानों, वित्तीय संस्थानों, वैज्ञानिक अनुसंधान, सामाजिक कार्यशालाओं आदि की रुचि आज ज्यादा से ज्यादा ग्रामीण उत्थान में है।

भारत की अधिकांश जनसंख्या ग्रामीण, निरक्षर और गरीब है। ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को बनाना एक बात है, किन्तु इनका सुचारू रूप से संचालन करना एक दूसरी बात है। आज आवश्यकता है ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रचार की। जब तक ग्रामवासियों को इन कार्यक्रमों से अवगत नहीं कराया जाएगा, वे इनका लाभ उठाने में असमर्थ रहेंगे। हमारा उद्देश्य ग्रामीणों को इन कार्यक्रमों की जानकारी देना, उन्हें शिक्षित करना एवं उनमें जागरुकता पैदा करना है।

सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के कार्यालय जैसे आकाशवाणी, दूरदर्शन और पत्र सूचना कार्यालय आदि के द्वारा इन लक्ष्यों की प्राप्ति संभव है। इन माध्यमों द्वारा सरकार की नीतियों और कार्यक्रमों से सम्बन्धित जानकारी का व्यापक प्रचार संभव है। इस प्रकार देश का समन्वित विकास हो सकेगा तथा इस राष्ट्रीय प्रयास में लोगों की भागीदारी हो सकेगी।

ग्रामीण विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों व योजनाओं की जानकारी ग्रामीण जनपदों तक पहुंचाने तथा विशेषकर ग्रामीण विकास मंत्रालय के विभिन्न कार्यक्रमों जैसे जवाहर रोजगार योजना, समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम इत्यादि से सम्बन्धित जानकारी

के व्यापक प्रसार तथा अन्य संचार लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु ग्रामीण विकास मंत्रालय का प्रचार एवं संचार सेल कार्यरत है।

भारत की 77 प्रतिशत आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है। ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के ग्रामीण, सीमावर्ती और संवेदनशील क्षेत्रों में प्रसार एवं प्रचार के लिए श्रव्य और दृश्य मीडिया की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण है। आकाशवाणी और दूरदर्शन पर मंत्रालय के वरिष्ठ अधिकारियों की भेंटवार्ताएं नियमित रूप से प्रसारित की जाती हैं। राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान को ग्रामीण क्षेत्रों में महिला और शिशु विकास योजना आदि से सम्बन्धित वीडियो फिल्में वितरित की जाती हैं। सूचना और प्रसारण मंत्रालय विभिन्न योजनाओं व कार्यक्रमों पर अपने फिल्म प्रभाग में फिल्म निर्माण कराता है। यू-मैटिक फिल्में क्षेत्रीय भाषाओं में डब की जाती हैं तथा इनकी बहुत सी प्रतियां बनाई जाती हैं तथा इसकी वी०एच०एस० कैसेट राज्य प्रशिक्षण संस्थानों में वितरित की जाती हैं। प्रचार व संचार सेल जनसंपर्क स्थापित करने तथा लोक शिक्षार्थ हेतु भारतीय अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मेले में भाग लेता है और गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम की जानकारी व उपलब्धियां प्रदर्शित की जाती हैं।

सरकार ने जो कार्यक्रम बनाए हैं उन्हें जन जन तक पहुंचाने की और इनके कार्यान्वयन में लोगों की भागीदारी की, जनसहयोग की आवश्यकता है। इसके लिए सरकारी नीतियों और कार्यक्रमों से सम्बन्धित जानकारी के व्यापक प्रसार और प्रचार भी आवश्यकता है। प्रचार एवं प्रसार का कार्य पारस्परिक सम्पर्क के परम्परागत तरीकों एवं लोक शैलियों द्वारा तथा अति आधुनिक दृश्य-श्रव्य माध्यमों द्वारा संभव है।

आकाशवाणी के कार्यक्रमों को ज्यादा से ज्यादा ग्रामीणों के लिए उपयोगी बनाने का प्रयास होना चाहिए, देखने में आया है कि अधिकतर कार्यक्रमों का चुनाव शहरी श्रोताओं को ध्यान में रखकर किया जाता है। ऐसा शायद वाणिज्यिक लाभों को ध्यान में रखते हुए किया जाता है। आकाशवाणी को बहुजन हिताय बहुजन सुखाय जैसे अपने लक्ष्य को नहीं भूलना चाहिए।

आकाशवाणी द्वारा ग्रामीण विकास कार्यक्रमों से संबंधित भेंटवाताएं, परिचर्चाएं, विभिन्न बुद्धिजीवियों व सामाजिक कार्यकर्त्ताओं के साथ भेंटवार्ताओं आदि को प्रसारित किया जाना चाहिए। इस प्रकार किये गये प्रचार-प्रसार द्वारा विभिन्न कार्यक्रमों का ग्रामीण निर्धनों के लिए क्या महत्व है तथा इन कार्यक्रमों से वे किस प्रकार लाभान्वित हो सकते हैं उन्हें स्पष्ट हो जाएगा। आकाशवाणी की केन्द्रीय शिक्षा योजना इकाई ग्रामीण युवकों को शिक्षित करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। समाचार सेवा प्रभाग समाचार बुलेटिनों द्वारा लोक शिक्षा, व ग्रामीण निर्धनों के लिए सरकार के विभिन्न कार्यक्रमों के प्रति चेतना का स्रोत है।

दूरदर्शन

टेलीविजन अपने आकर्षक प्रभाव और रुचिकर होने के कारण अन्य माध्यमों से अधिक महत्वपूर्ण है। इसी कारणवश सरकार टेलीविजन के बारे में ज्यादा दिलचस्पी रखती है।

रेडियो के अलावा ऐसा कोई भी अन्य माध्यम नहीं है जो इतने बड़े पैमाने पर इतनी अधिक जनता के साथ सम्पर्क बना पाया हो। जहां तक शिक्षा संस्कृति, जानकारी और मनोरंजन का सवाल है टेलीविजन की पहुंच और उपलब्धि अद्वितीय है।

आज आवश्यकता है विकास कार्यक्रमों की, जो कि गरीबों, कमजोर वर्गों, और उपेक्षित वर्गों के लिए बनाए जाते हैं, उनमें लोगों की भागीदारी की। जब तक जन सहयोग नहीं होगा कोई भी कार्यक्रम सफल न हो सकेगा। सामुदायिक भागीदारी तभी संभव है जब ग्रामीण निर्धनों में जागरुकता पैदा की जाए। इसके लिए प्रचार माध्यमों को सशक्त बनाना ही होगा।

मकान नं. 414
सेक्टर 37, फरीदाबाद

लोक शिक्षा और सामाजिक न्याय

□ डॉ० हुकुम चन्द जैन □

विश्व में भारतीय समाज सर्वाधिक विविधताओं वाला समाज है । इन विविधताओं के अनेक आयाम हैं । इन सामाजिक-आर्थिक विषमताओं का निराकरण मात्र राजनैतिक दृष्टि से संभव नहीं है । इसके लिए समाज के उस वर्ग की शिक्षा-दीक्षा जरूरी है जो सदियों से अज्ञान और सांस्कृतिक वंचना का शिकार रहा है । इसके अलावा वैसे भी शोषण, बंधन एवं गुलामी से मुक्ति का प्रवेश द्वारा शिक्षा ही है जो व्यक्ति को उसके स्वत्व की रक्षा करना सिखाती है । अतः लोक शिक्षा की कारगर व्यवस्था ही सामाजिक न्याय का हेतु बन सकती है, इसमें दो राय नहीं हैं ।

देश की स्वतंत्रता के बाद समाज में व्याप्त विभिन्न अन्तर्विरोधों को खत्म करने की दिशा में संवैधानिक प्रक्रिया अपनायी गयी है । किन्तु संवैधानिक दृष्टि से ओढ़ी गयी राजनैतिक समानता के नीचे ढकी अनेक सामाजिक-आर्थिक विषमताओं का निराकरण स्वस्थ लोकतांत्रिक प्रक्रिया एवं सामाजिक पुनर्निमाण की दृष्टि से आवश्यक है । डॉ० भीमराव आम्बेडकर ने 25 नवम्बर 1949 को संविधान सभा के समक्ष विचार व्यक्त किया था–"26 जनवरी 1950 को हम जीवन के अन्तर्विरोधों में प्रवेश करने जा रहे हैं । राजनीति में हम समानता प्राप्त करेंगे और सामाजिक एवं आर्थिक जीवन में असमानता । राजनीति में हम एक व्यक्ति एक मत और सामाजिक और आर्थिक जीवन में अपनी सामाजिक एवं आर्थिक संरचना के कारण एक व्यक्ति को और एक मत के सिद्धांत को नकारना जारी रखेंगे । अन्तर्विरोधों के इस जीव को हम कब तक जारी रखेंगे ?" देश में इस स्थिति के प्रति अभी भी ज्यादा बदलाव नहीं आया है ।

औपनिवेशिक गुलामी के दौरान जन्मी आपसी फूट, जाति, भाषा, धर्म आदि के नाम पर खड़ी की गयी दीवारों के भग्नावशेष भी हमारी प्रगति में बाधक बने हुए हैं । भारतीय संविधान निर्माताओं ने स्वतंत्रता के बाद इन विषम परिस्थितियों में देश के पुनर्निर्माण की दृष्टि से शिक्षा के सामाजिक, आर्थिक एवं राष्ट्रीय लक्ष्यों की पूर्ति हेतु उसे एक नया स्वरूप दिया । शिक्षा की एक निश्चित नीति एवं योजना तैयार की गयी । कमजोर वर्गों के लिए भी संवैधानिक दृष्टि से कई शैक्षिक सुविधाओं का प्रावधान किया गया । देश में लोक शिक्षा की दृष्टि से संविधान के अनुच्छेद 45 में अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा, अनुच्छेद 30 में अल्पसंख्यकों के अंतर्गत संविधान की स्थापना हेतु प्रावधान किया गया है । मौलिक अधिकारों के अंतर्गत संविधान के अनुच्छेद 15 और 17 में धर्म, प्रजाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर किसी प्रकार के विभेद को निषेध किया गया है । इस तरह शिक्षा को धर्मनिर्पेक्ष रखा गया है । संविधान के अनुच्छेद 15(3) में महिलाओं और बच्चों की शिक्षा के लिये विशेष प्रावधान किया गया है । इसी तरह अनुच्छेद 46 में राज्य के नीति-निदेशक सिद्धांतों के अंतर्गत अनुसूचित जातियों, जनजातियों और अन्य कमजोर वर्गों के शैक्षिक एवं आर्थिक हितों की रक्षा हेतु विशेष प्रावधान किये गये हैं । इस सब के बावजूद कमजोर वर्गों की शिक्षा और उनकी सामाजिक स्थिति में ज्यादा बदलाव नहीं आया है । यह यहां विचारणीय प्रश्न है ।

वर्तमान में भारत की कुल जनसंख्या में अनुसूचित जातियों और जनजातियों का प्रतिशत लगभग 23 है जबकि इनके मध्य साक्षरता क्रमशः 21.28 और 16.35 प्रतिशत है जो कि अन्य लोगों के बीच साक्षरता का प्रतिशत 41.22 से कम है । देश में अनेक क्षेत्र ऐसे हैं जहां इन्हीं वर्गों में महिला शिक्षा नगण्य है ।

अब तक जो भी संवैधानिक एवं वैधानिक उपाय इन वर्गों के लिये सामाजिक न्याय हेतु किये गये, वे ज्यादा कारगर सिद्ध नहीं हुये । वस्तुतः प्रश्न चाहे महिला उत्थान का हो या कमजोर वर्गों के पुनरुद्धार का, भारतीय समाज की विशेष सामाजिक-आर्थिक सरंचना के कारण इन सारे विधि-विधानों का लाभ इन वर्गों तक नहीं पहुंच पाया है । अगर वास्तव में हम सामाजिक न्याय दिलाना चाहते हैं तो भूमि वितरण एवं सुधार, जनसंख्या नियंत्रण और आर्थिक उत्थान जैसे महत्वपूर्ण कार्यक्रमों के साथ इनकी शिक्षा पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है ।

समाज के कमजोर वर्गों के लिये किस तरह का सामाजिक न्याय चाहिये यह यहां विचारणीय प्रश्न है । संवैधानिक दृष्टि

से समानता, स्वतंत्रता एवं बंधुत्व सामाजिक न्याय की त्रिवेणी है। हमारा संवैधानिक आदेश "सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक न्याय, विचार अभिव्यक्ति, विश्वास एवं उपासना की स्वतंत्रता, प्रास्थिति एवं अवसर की समानता, भ्रातृत्व, व्यक्ति की गरिमा बनाये रखने और राष्ट्र की एकता का उन्नयन" सामाजिक न्याय का पोषक एवं मार्गदर्शक है। इन मूल्यों की प्राप्ति के लिये लोकशिक्षा किस तरह सहायक हो सकती है, यह यहां प्रतिपाद्य विषय है। लोक शिक्षा को इस दिशा में एक कारगर भूमिका निभानी है जो दो तरह से संभव है–एक तो जो कमजोर वर्ग सामाजिक न्याय से अभी दूर रहा है उसको भी इन नये सामाजिक एवं संवैधानिक मूल्यों से संस्कारित करना जरूरी है। इस दृष्टि से लोक शिक्षा की भूमिका बहुआयामी है। प्रश्न चाहे महिला उत्थान का हो या उपभोक्ता अधिकारों के संरक्षण का, लोक शिक्षा के बिना सामाजिक न्याय की बात संभव नहीं है।

आज भारतीय समाज में जो कुछ हम अवांछनीय देख रहे हैं उसका एक मुख्य कारण लोक शिक्षा का अवरुद्ध होना है।

भारत में एक लम्बे समय से लोक शिक्षा की परम्परा बहुविधि सम्पन्न की जाती रही है। इसी शृंखला में सन्त परम्परा द्वारा लोक शिक्षा की परम्परा का निर्वाह हमारी एक मुख्य विशेषता रही है। कबीर, तुलसी, तिरूवल्लुवर, गुरु नानक, रैदास, महाप्रभु चैतन्य, दादूदयाल, रहीम आदि अनेक संतों के द्वारा लोक शिक्षण की इसी परम्परा का निर्वाह किया गया। रूढ़ सामाजिक रीति-रिवाजों, अन्ध मान्यताओं और बास्य लोकाचार में फंसे लोक समाज को बदलते जीवन मूल्यों से दीक्षित करने में संतों ने समय-समय पर महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।

लोक शिक्षा की यह परम्परा नये-नये रूपों में फलीभूत हो रही है। भारतीय परम्परा के आधुनिकीकरण के साथ यह परम्परा अवरुद्ध भले ही हो गयी हो लेकिन पूरी तरह रुकी नहीं है। आधुनिक भारतीय समाज के लोक शिक्षण में राजा राम मोहन राय, रानडे, स्वामी दयानंद सरस्वती, महात्मा फुले, स्वामी विवेकानंद, श्री रामकृष्ण परमहंस, महात्मा गांधी, श्री अरविन्द, रवीन्द्र नाथ टैगोर, डॉ० भीमराव अम्बेडकर, आचार्य विनोबा भावे और लोक नायक जयप्रकाश जैसे अनेकानेक महापुरुषों ने योगदान दिया है।

अब महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि वर्तमान समय में लोक शिक्षा का स्वरूप क्या हो? औपचारिक शिक्षातंत्र के द्वारा जिन शैक्षिक मूल्यों को पोषित किया जाता है वे समाज के एक सीमति वर्ग तक ही पहुंच पाते हैं क्योंकि औपचारिक शिक्षा की अपनी सीमायें हैं। समाज का बहुसंख्यक वर्ग जो कार्यात्मक रूप से उत्पादक है, प्रायः औपचारिक शिक्षा की परिधि से बाहर हो जाता है। यही वर्ग सामाजिक-आर्थिक क्रियाओं में सक्रिय भूमिका निभाता है और सामाजिक संबंधों का एक प्रतिमान स्थापित करता है। अतः इस वर्ग की शिक्षा के उपायों पर विचार करना सामाजिक न्याय की दृष्टि से ज्यादा सार्थक होगा। इसलिए औपचारिक और अनौपचारिक शिक्षा के दायरे को विकसित करना आज की सबसे बड़ी जरूरत है। प्रौढ़ शिक्षा एवं सतत शिक्षा के माध्यम से लोक शिक्षा का यह प्रवाह सतत बनाये रखा जा सकता है। सम्प्रेषण और संचार माध्यमों के बेहतर उपयोग से व्यक्ति और समाज के मूल्यों, मान्यताओं, विश्वासों और अभिमत में बदलाव की बड़ी गुंजाइश है।

लोक शिक्षा एक बहुमाध्यमी प्रक्रिया है। अतः इसके प्रसार में परम्परागत माध्यमों का तो प्रयोग किया ही जाय, साथ में प्रिंट एवं इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का भी उपयोग किया जाना चाहिये। आज देश में सभी प्रकार का तकनीकी ज्ञान उपलब्ध है। इसलिए लोक शिक्षा के प्रसार की संभावनायें पहले से कहीं ज्यादा हैं। संचार के आधुनिक माध्यमों का प्रयोग इस दिशा में निश्चित ही सकारात्मक परिणाम देगा।

प्रौढ़ संतत शिक्षा एवं विस्तार विभाग,
डा० हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय
सागर।

ये हैं 3 ठोस कारण ई सी जी सी सुरक्षा को अपनाने के.

इन्हें ध्यान से पढ़िए

ये या अन्य कोई कारण आपको प्रभावित कर सकते हैं क्योंकि आजकल कोई भी निर्यात सौदा सुरक्षित नहीं है- और भुगतान प्राप्त न होने का ख़तरा वाकई है. भुगतान में एक चूक निर्यातक के रूप में आपकी वर्षों की मेहनत पर पानी फेर सकती है. पिछले तीन दशकों में ई सी जी सी ने कुल रु. 486 करोड़ के दावों का भुगतान किया है. अप्रैल '91 से मार्च '92 तक के एक साल में रु. 105 करोड़ के दावों का भुगतान अभी तक किया जा चुका है, और इससे अनेको को व्यवसाय में टिके रहने में मदद मिली है.

ऐसे में ही तो ई सी जी सी पॉलिसी काम आती है. सावधानी बरतिए. सुरक्षा अपनाइए. ई सी जी सी सुरक्षा. आज ही. हमसे सम्पर्क कीजिए या हमें लिखिए. याद रखिए आपमें और ई सी जी सी के कार्यालय में सिर्फ़ एक फोन कॉल की दूरी है.

जोखिम से रक्षा. ई सी जी सी सुरक्षा

भारतीय निर्यात ऋण गारण्टी निगम लि.
(भारत सरकार का उपक्रम)
एक्सप्रेस टॉवर्स, 10 वां तल,
नरीमन पॉइन्ट, बम्बई- 400 021
फोन 2023023/3046/3196/3267
टेलेक्स 011-83231 तार INDERIC.
फैक्स (9122) 2045253

□ **बम्बई** फोन 223740/223780/223527/223610/224132 □ **अहमदाबाद** फोन 408499/426494 □ **पुणे** फोन 321998/421388 □ **कलकत्ता** फोन 401369/475386/475548 □ **वाराणसी** फोन 44792 □ **भुवनेश्वर** फोन 54837 □ **गुवाहाटी** □ **मद्रास** फोन 8254560/472615/472908/473146 □ **बंगलौर** फोन 589775/589779 □ **कोचीन** फोन 354447/364016 □ **हैदराबाद** फोन 234334/231346 □ **कोयम्बतूर** फोन 49284 □ **दिल्ली** फोन 3317509/3319125/3320853 फैक्स 011 3317708 □ **लुधियाना** फोन 403078 □ **कानपुर** फोन 311249 □ **मुरादाबाद** फोन 310244 □ **जयपुर** फोन 520015 □ **आगरा** □ **श्रीनगर** □

Multimedia Aquarius/ECGC/16F/92 Hindi

आर.एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : (डी (डी एल) 12057/92
पूर्व भुगतान के बिना डी.पी.एस.ओ. दिल्ली में डाक में डालने
की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)-55

RN/708/57
P & T Regd. No. D (DL) 12057/92
Licenced under U (DN)-55
to post without pre-payment at DPSO, Delhi-54

डा. श्याम सिंह शशि, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और
वीरेन्द्रा प्रिंटर्स, हरध्यान सिंह रोड, करोल बाग
नई दिल्ली-110005 द्वारा मुद्रित